जून 2004

मूल्य : सात रुपये

कुरुक्षेत्र

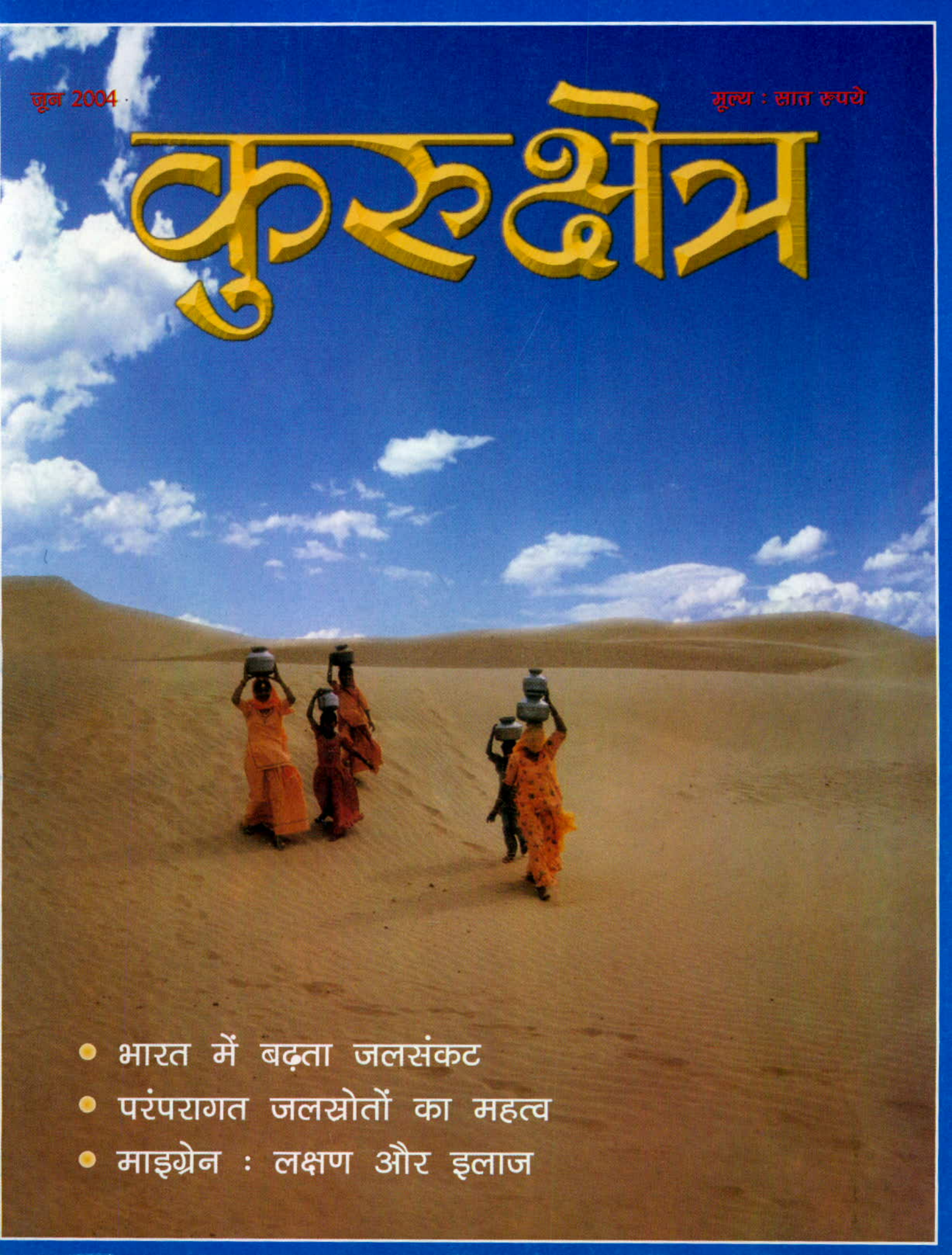

- भारत में बढ़ता जलसंकट
- परंपरागत जलस्रोतों का महत्व
- माइग्रेन : लक्षण और इलाज

महिलाओं के लिए पंचायतों में 50 प्रतिशत आरक्षण की मांग

महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण दिवस (24 अप्रैल) की दसवीं वर्षगांठ इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंस में 23 से 25 अप्रैल 2004 तक कई कार्यक्रमों का आयोजन करके मनाई गई। देशभर से आई 1500 से अधिक निर्वाचित महिला पंचायत प्रतिनिधियों ने इसमें भाग लिया। साथ ही बड़े पैमाने पर शिक्षाविदों, शोधार्थियों, और गैर–सरकारी संगठनों के सदस्यों, मीडिया के लोगों सहित वरिष्ठ सरकारी अधिकारियों ने भी इसमें भाग लिया। कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण रही 'महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण के दस वर्ष : आगे का सफर' विषय पर आयोजित कार्यशाला। इस विषय के विभिन्न कोणों और इसके स्वास्थ्य, शिक्षा, कानून, जीविकार्जन और पर्यावरण, सरकारी संगठनों की भूमिका और चुनाव प्रक्रिया आदि मुद्दों की विशेषज्ञों सहित जनप्रतिनिधियों ने समीक्षा की। इस अवसर पर निर्वाचित महिला पंचायत सदस्यों और अध्यक्षों के संघर्ष पर बना राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित फिल्म 'स्वराज : द लिटिल रिपब्लिक' भी दिखाई गई। विभिन्न राज्यों से आए लोकनृतकों ने सांस्कृतिक कार्यक्रम भी पेश किए। संस्थान के सदस्यों ने 'फैसला ठीक है' नाटक पेश किया जो कार्यक्रम का अन्य प्रमुख आकर्षण था और एक 'मांग घोषणापत्र' पारित किया गया।

महिला पंचायत प्रतिनिधियों में बिल्कुल अनपढ़ या कम पढ़ी–लिखी महिलाओं की संख्या पिछले वर्षों की तुलना में कम थी। उत्कृष्ट महिला पंचायत नेता पुरस्कार तीन सरपंचों को दिया गया। मध्य प्रदेश की सुश्री एकता जायसवाल को 'हाइटैक सरपंच' का पुरस्कार दिया गया तो केरल की पी. सेबी बालकृष्णन को 'आंदोलनकारी' पुरस्कार से नवाजा गया। छत्तीसगढ़ की सुश्री निर्मला देवी साहू को सरकारी योजनाओं को प्रभावपूर्ण तरीके से लागू करने के लिए पुरस्कृत किया गया।

इस दौरान आपसी विचार–विमर्श के दौरान जो मुद्दे उठाए गए उनमें पंचायतों में स्वशासन, पारदर्शिता, जवाबदेही से लेकर इसके सामाजिक पहलू पर भी विचार किया गया। स्थानीय निकायों में 'महिलाओं के लिए आरक्षण' की भूमिका को सराहा गया। अधिकतर प्रतिनिधियों ने विचार रखा कि हालांकि पंचायतों को 29 विषयों का जिम्मा सौंपा गया है किंतु जहां तक वित्तीय शक्ति देने का सवाल है, वे अभी तक पेपरों तक ही सीमित हैं। अन्य मुद्दे जिनपर अच्छी बहस हुई उनमें शिक्षा तथा स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच में लिंग के आधार पर होने वाला भेदभाव शामिल था। कई प्रतिनिधियों का विचार था कि स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए आरक्षण के प्रावधान को सशक्तिकरण प्राप्त करने की राह में जादुई छड़ी के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए क्योंकि इसमें कई खामियां हैं।

ये भी महसूस किया गया कि वैश्वीकरण के इस दौर में पंचायतों और खासतौर से महिला प्रतिनिधियों को आजीविका के संदर्भ में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी होगी। आवश्यक सेवाओं जैसे स्वास्थ्य और शिक्षा को और बेहतर तरह से उपलब्ध कराया जा सकता है। अंत में, चुनी हुई महिला प्रतिनिधियों को इस बात का स्वयं ध्यान रखना होगा कि उन्हें मांग घोषणापत्र को लागू करने के लिए दबाव डालने का पूरा अधिकार है किंतु उन्हें इस सबमें अपनी स्वयं की जवाबदेही को नहीं भूलना होगा।

समारोह में शामिल मुख्य वक्ताओं में इंडिया इंटरनेशनल सेंटर की पूर्व अध्यक्ष डा. कपिला वात्स्यायन, पूर्व राज्यसभा सदस्य शबाना आजमी, सुप्रीम कोर्ट की वरिष्ठ वकील इंदिरा जयसिंह, इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंस के निदेशक डा जार्ज मैथ्यू, राष्ट्रीय महिला आयोग की अध्यक्ष पूर्णिमा आडवाणी सहित पूर्व निर्वाचन आयुक्त श्री एम.एस.गिल ने भी अपने विचार रखे। 'स्वसहायता समूह' जोकि गांवों में पंचायतों के साथ मिलकर काम कर रहे हैं, ने गांवों में महिलाओं की रचनात्मक क्षमता का प्रदर्शन किया कि जब महिलाएं संगठित होकर काम करती हैं तो वे क्या नहीं कर सकतीं।

समारोह में शामिल होने वाली महिला प्रतिनिधि 845 पंचायतों और निगमों का प्रतिनिधित्व कर रही थीं। पहली बार लेह (जम्मू कश्मीर), नगालैंड, झारखंड और मलकांगिरी (उड़ीसा) के प्रतिनिधियों ने समारोह में हिस्सा लिया। अधिकतर प्रतिनिधि 30 से 40 वर्ष की और ग्राम पंचायतों की प्रतिनिधि थीं। अनुसूचित जातियों खासतौर से सबसे पिछड़ी मुशहार समुदाय की महिलाओं सहित आदिवासी महिलाएं बड़ी संख्या में शामिल हुईं। यही नहीं देश के सबसे पिछड़े हुए जिलों की मुस्लिम महिलाओं ने भी बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया। महिला पंचायत सदस्यों के साथ भाग लेने आए पुरुषों की संख्या पिछले वर्षों की तुलना में कम थी। महिला प्रतिनिधियों ने महिलाओं के लिए शासन में 50 प्रतिशत आरक्षण का समर्थन किया।

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की
प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 50 ● अंक : 8

ज्येष्ठ–आषाढ़ 1926

जून 2004

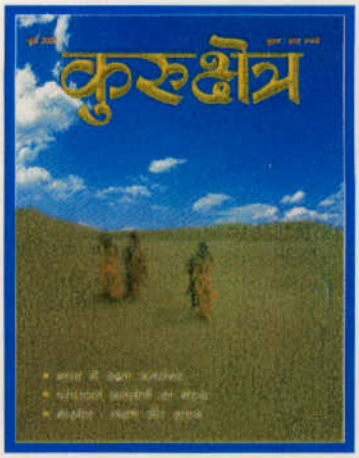

प्रधान संपादक
महादेव पकरासी
प्रभारी संपादक
ललिता खुराना
उप संपादक
जयसिंह
संपादकीय पत्र–व्यवहार
संपादक, **कुरुक्षेत्र**
कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23015014,
फैक्स : 011–23015014
तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : dpd@sh.nic.in dpd@pub.nic.in
संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी.एन. गांधी
व्यापार व्यवस्थापक
दूरभाष : 24367260, 2436509, 24365610
आवरण फोटो
सर्वेश
आवरण
अमित
सज्जा
अजय भंडारी

मूल्य एक प्रति	:	सात रुपये
वार्षिक शुल्क	:	70 रुपये
द्विवार्षिक	:	135 रुपये
त्रिवार्षिक	:	190 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	700 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

लेख

जल संसाधनों का दुरुपयोग और बचाव के उपाय	डा. गणेश कुमार पाठक	7
भारत में बढ़ता जलसंकट	जगनारायण, मधु ज्योत्सना	15
स्वच्छ पेयजल का सपना कब होगा साकार	डा. एस.के. लखेड़ा, संजय ध्यानी	18
परंपरागत जलस्रोतों का महत्व	भारत डोगरा, रेशमा भारती	22
जल प्रबंधन और समाज का उत्तरदायित्व	विमला साहू डा. अमरजीत कौर गिर	25
बुंदेलखंड की बंजरभूमि में हरियाली संभव	डा. मुकेश चंद्र एन. वी. सिंह	27
विशेष आर्थिक क्षेत्र – एक आकलन	वेद प्रकाश अरोड़ा	31

रोजगार

सफेद मूसली अत्यंत लाभकारी फसल	एम. भारती	34
वेनिला के निर्यात की अपार संभावनाएं	आर. बी. एल. गर्ग	36

योजना परिचय

एन.सी.डी.सी. की योजनाओं पर एक नजर	जय भगवान त्यागी	38

सफलता की कहानी

आत्मनिर्भर होने के दिन दूर नहीं	ऋषिका खरे	43

स्वास्थ्य चर्चा

माइग्रेन : लक्षण और इलाज	डा. नीना कनौजिया	44
रक्तदान से जुड़े कुछ खास प्रश्न	डा. विनोद गुप्ता	46

पुस्तक चर्चा

निर्धनता निवारण की चुनौती		47
जनकवि नागार्जुन	सीमा ओझा	48

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में ए.के. दुग्गल, सहायक विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

मत–सम्मत

तिकड़मी गरीबों का हक डकार जाते हैं

ग्रामीणों के जीवनस्तर को सुधारकर उसे बेहतर रूप देने के लिए सरकार द्वारा जो–जो कल्याणकारी योजनाएं चलाई जाती हैं अगर उनका वाजिब लोगों को लाभ मिल सके तो भारत की तस्वीर कुछ ही दिनों में विश्व के लिए अचरजकारी साबित हो सकती है लेकिन दुःख की बात है कि पात्र लोग इंतजार ही करते रह जाते हैं और तिकड़मी लोग उनके हकों को डकार जाते हैं। अपने अंक में डा. नरेन्द्र पाल सिंह का आलेख 'ग्रामीण क्षेत्रों में बैंक ऋण उपादेयता और वसूली निष्पादकता' इस बारे में बहुत अच्छी तथा सुगम जानकारी देता है। साहित्य स्तंभ में डा. सविता मिश्रा और मनुस्वामी की कहानियां प्रेरक और शिक्षाप्रद हैं। ये कहानियां वर्तमान हालातों की सच्ची स्थिति तो बयां करती हैं साथ ही बदलते वक्त की कमजोरियों पर भी नजर डालती हैं। ग्रामीणों के सर्वत्र कल्याण को समर्पित *कुरुक्षेत्र* निश्चय ही जिंदगी से निराश हो चले लोगों को जीने की प्रेरणा देती रहेगी।

छैलबिहारी शर्मा इन्द्र
छाता–281401

सूर्य को दीपक

कुरुक्षेत्र का अप्रैल अंक पढ़ा। ऐसा लग रहा है कि मैं सूर्य को दीपक दिखा रहा हूं। क्योंकि जैसी अपेक्षा हम *कुरुक्षेत्र* से करते हैं, बिन मांगे वरदान मिलने सरीखा अनुभव होता है। इस अंक में नए प्रयोग के तौर पर आपने जिस प्रकार कई विद्वानों की ओजपूर्ण उक्तियों से हमें अवगत कराया, अत्यंत ही अच्छा लगा। अनुरोध है कि इस तरह की महत्वपूर्ण वाणी को आप आगे भी जारी रखें क्योंकि ऐसी उक्तिओं से ऐसे जोश व उत्साह का संचार होता है कि मुर्दे में भी नई जान आ जाए। नवसंवत् की जिस तरह आपने याद दिलाई, प्रासंगिक तो है ही, आश्चर्यजनक भी लगा क्योंकि पहली जनवरी को आज हर कोई जानता है– चाहे वह सुदूर ग्रामीण परिवेश का नागरिक हो अथवा महानगर के लोग, लेकिन पहली चैत के बारे में जानने की उत्कंठा बहुत कम लोगों को ही रहती है। ऐसा ही लगा मानो *कुरुक्षेत्र* न केवल हमें नई–नई जानकारी देती है बल्कि हमारी संस्कृति का पोषण भी बखूबी करती है।

पूर्वोत्तर क्षेत्र के संदर्भ में कई रोचक जानकारियां मिलीं। सबसे अच्छा तो यह लगा कि उस क्षेत्र की 64.31 प्रतिशत भूमि अभी भी वन आच्छादित है। वहीं अफसोस भी हुआ कि वर्षों से विशेष राज्य का दर्जा पाने के बावजूद भी वहां अपेक्षित विकास नहीं हो पाया है। सरकार को समय रहते ठोस उपाय करने ही होंगे। वहीं हरियाणा की यह खबर कि एक तहसील में तो लड़कों की अपेक्षा लड़कियों का अनुपात 743 तक में सिमट गया है, ने दिल को झकझोर कर रख दिया। समझ में नहीं आता, क्यों नहीं इस खाई को दूर करने के उपाय किए जा रहे हैं? हमें तो भविष्य ही अंधकारमय दिखाई पड़ता है। क्या बिना लड़कियों के भी समाज का अस्तित्व रह पाएगा! ऐसा लगता है कि प्रकृति भी असंतुलित होकर एक दिन दम तोड़ देगी जिसके लिए जिम्मेवार सिर्फ मानव जाति होगी।

गुग्गुल के बारे में कई तरह की जानकारी प्राप्त हुईं। केसर के बारे में पढ़कर भी काफी जिज्ञासाएं शांत हुईं। मधुमेह के बारे में जानकारी तो प्राप्त हुई लेकिन अच्छा होता कि इसके बचाव हेतु और अधिक विस्तृत जानकारी देते।

सविता जी की कहानी 'जीवन के रंग अनेक' यथार्थ के काफी करीब लगी। लघु कथा 'सफर' तथा कविता 'आईना' भी हमें सीख देते गए कि प्रकृति के साथ व्यक्ति को बदलना ही पड़ता है। और शायद परिवर्तन हीं प्रकृति का दूसरा नाम है।

मिथिलेश कुमार
ग्राम+पोस्ट बलुआवक,
जिला भागलपुर, (बिहार) 812005

ग्रामीण विकास की अन्य पत्रिकाओं की जानकारी भी दें

मैं आपकी पत्रिका का पिछले पांच सालों से नियमित पाठक हूं। आप इतनी कम कीमत पर उच्चस्तरीय ग्रामीण विकास की जानकारी से परिपूर्ण पत्रिका उपलब्ध करा रहे हैं।

अप्रैल माह के अंक में 'क्षेत्रीय ग्रामीण बैकों का परिप्रेक्ष्य', 'ग्रामीण क्षेत्रों में बैंक ऋणः उपादेयता और वसूली निष्पादकता', 'ग्रामीण विपणन की समस्याएं एवं संभावनाएं', जड़ी–बूटी गुग्गल एवं सफलता की कहानी 'राज राजेश्वरी योजना गरीब महिलाओं का सहारा' आदि सराहनीय हैं। इस माह का अंक आंकड़ों से भरपूर था।

आपसे विनम्र निवेदन है कि एक कॉलम में ग्रामीण विकास से संबंधित अन्य स्तरीय पत्रिकाएं कहां–कहां से छप रही हैं एवं ग्रामीण विकास से संबंधित पुस्तकों की सूचियां प्रकाशित करने का कष्ट करें।

ओमप्रकाश सिंह
प्रवक्ता अर्थशास्त्र
एन.आर.ई.सी.कालेज,
खुर्जा, बुलंदशहर

अत्यंत सुंदर

कुरुक्षेत्र मासिक पत्रिका प्रत्येक माह किसानों, बेरोजगार युवकों, युवतियों, महिलाओं को घरेलू उद्योग, कृषि जानकारी, स्वास्थ्य जानकारी, घरेलू रहन–सहन की जानकारी देती है तथा सभी पत्र–पत्रिकाओं से अत्यंत सुंदर है फिर भी कीमत इतनी कम रखी गई है ताकि भारत की जनता विकास की ओर ध्यान दे।

गांधीजी ने हाड़–मांस सुखाकर, सादगीपूर्ण जीवन बिताकर सत्य–अहिंसा के बल पर अंग्रेजों को भगाकर देश आजाद कराया।

परंतु हमारे देश के राजनेताओं ने लोकतंत्र को भोगतंत्र में बदलकर भारत की मुख्य समस्या निरक्षरता दूर करने की ओर ध्यान न देकर 'लूटो और मूर्ख बनाए रखो' की नीति अपनाकर शिक्षानीति को ही 'लूटनीति' बना रखा है जोकि देशहित के लिए ठीक नहीं है। मैं *कुरुक्षेत्र* के माध्यम से सभी राजनीतिक पार्टियों के वरिष्ठ नेताओं से विनती करता हूं कि शिक्षानीति को जमीन पर उतारने के लिए सभी भार अभिभावकों के माथे सौंप दें और जनसंख्या वृद्धि रोकने के लिए नीतियों को सख्ती के साथ लागू करें, तभी भारत का उदय होगा अन्यथा भारत उदय नहीं बल्कि भारत का सूर्य अस्त होकर रहेगा।

डा. नागेश्वर प्रसाद जायसवाल
ग्राम बड़हरा कोठी, पोस्ट बड़हराकोठी,
जिला पूर्णिया, (बिहार) 854203

भारतीय अर्थव्यवस्था की तरोताजा जानकारी

कुरुक्षेत्र पत्रिका खासकर अर्थशास्त्र से जुड़े लोगों के दृष्टिपटल पर लाभकारी प्रतीत होती है। मैंने अप्रैल 2004 अंक पढ़ा। पढ़ने से ही यह पत्रिका रुचिकर लगी एवं इस अंक में प्रकाशित आलेख : ''ग्रामीण विपणन समस्याएं और संभावनाएं'' बहुत ही आकर्षक लगा। इस आलेख के नवीनतम आंकड़े बहुत ही उपयोगी हैं। डा. विजय सिंह राघव का प्रकाशित आलेख 'पूर्वोत्तर क्षेत्र की अर्थव्यवस्था एक नजर में' जो आंकड़े दर्शाए गए हैं, वह अविस्मरणीय संग्रह है जो किसी प्रतियोगी परीक्षा के लिए मूलमंत्र सिद्ध हो सकता है। गौरतलब बात यह है कि अर्थशास्त्र के साथ हिन्दी साहित्य की भी झलक *कुरुक्षेत्र* में मिलती है। अप्रैल 2004 अंक में जो दो कविताएं 'फ़लसफा' एवं 'आईना' प्रकाशित की गई हैं वे साहित्यिक चिंतन को झकझोर कर रख देती हैं। यह अंक संग्रहणीय है।

डा. शिशिर कुमार सिंह
व्याख्याता, अर्थशास्त्र विभाग,
वीर कुंवर सिंह महाविद्यालय,
गौड्डा (झारखंड)

गांवों का समग्र विकास हो

ग्रामीण विकास में बैंकों की भूमिका पर आधारित अप्रैल का अंक आकर्षक था। भारत जैसे कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था वाले देश में तो ग्रामीण बैंकों की महत्ता और भी अधिक है। आज भी देश की 72.6 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में रहती है जिनके जीवन का आधार मुख्यतया खेती है अतः देश के विकास के लिए आवश्यक है कि गांवों का समग्र विकास किया जाए। संभवतः इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए स्व. इंदिरा गांधी ने 1969 में 14 प्रमुख बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर ग्रामोत्थान का दायित्व बैंकों को सौंपा था जिसके फलस्वरूप ग्रामीण विकास में गतिशीलता आई। वाणिज्य बैंक की शाखाएं बिहार के गांवों में नया खाता खुलवाने के लिए हरेक वर्ष संपर्क अभियान चलाती हैं। बिहार में साख जमा अनुपात बढ़ने के बजाय घटता जा रहा है। वर्ष 1999 में साख जमा अनुपात प्रतिशत बिहार में मात्र 25.2 था जबकि तमिलनाडु में यह 93 प्रतिशत था। साख जमा अनुपात कम रहना कम विनियोग को दर्शाता है। बिहार में वाणिज्य बैंकों की बचत जमा, स्थायी जमा, तथा आवर्ती जमाराशि में लगातार वृद्धि हो रही है जबकि साख जमा अनुपात में ह्रास हो रहा है। इस विरोधाभास के कारण औद्योगिक क्षेत्र में विनियोग की मात्रा कम है।

अजिताभ
पटना विश्वविद्यालय, पटना (बिहार)

लघु एवं कुटीर उद्योगों पर कम जानकारी

कुरुक्षेत्र अप्रैल 2004 का अंक अंततः अच्छा ही था। साहित्यिक रचनाएं भी अच्छी लगीं। कुटीर एवं लघु उद्योगों के बारे में पूर्ण जानकारी देते लेखों का अभाव खलता है। इन लेखों में उपकरणों एवं अन्य सामानों की सूची, कीमत, रखरखाव की जानकारी के साथ–साथ यदि उद्योगों को शुरू करने, उत्पादों के वितरण–विपणन संबंधी जानकारियां भी हों तो पत्रिका मूल्यवान हो जाएगी।

यह कम्प्यूटर का युग है। इससे संबंधित व्यवसायों की भी आवश्यकता पर ध्यान दीजिए। विशेषज्ञों से सलाह–मशविरा कर अथवा उनके लेखों को पत्रिका में स्थान देकर आप हम पाठकों पर मेहरबानी कर सकते हैं।

दिवेश कुमार शर्मा
बघड़ा

निजी और सरकारी प्रशिक्षण केंद्रों के पते दिया करें

कुरुक्षेत्र पत्रिका को पिछले तीन माह से लगातार देख रही हूं। लगभग सभी लेख अच्छे एवं जानकारीपूर्ण होते हैं लेकिन एक विशेष कमी महसूस करती हूं। स्वरोजगार के लिए निजी एवं सरकारी प्रशिक्षण केंद्रों का पूरा पता, फोन नंबर भी प्रकाशित करें ताकि प्रशिक्षण के लिए संपर्क किया जा सके। प्रशिक्षण या स्वरोजगार से संबंधित सरकारी विभागों, मंत्रालयों द्वारा प्रकाशित पुस्तकों का भी विवरण दें तो पत्रिका और सूचनाप्रद होगी। आशा और विश्वास की लहर लगभग सभी पाठकों में और तेजी से बहने लगेगी।

अप्रैल अंक में संपादकीय, ग्रामीण बैंकों की जानकारी, कहानी जीवन के रंग अनेक, लघुकथा सफर, कविताएं, प्रेरक प्रसंग बड़ी लकीर, प्रश्नोत्तरी, स्वास्थ्य चर्चा – यह सारे लेख बहुत अच्छे लगे और जानकारी से भरे थे।

रेनू विश्वकर्मा 'रश्मि'
ग्राम रामपुर सेमरहा
पोस्ट डीहा, तहसील करछना,
इलाहाबाद, 212307

भारतीय अर्थव्यवस्था और ग्रामीण समाज का दर्पण

होली के रंगों के बीच पत्रिका का मार्च अंक पढ़ा। आम बजट पर बसंल जी का लेख अत्यंत उपयोगी रहा। सच में भारत गांवों का देश है और जब तक गांव के लोगों के हाथों में रोजगार नहीं होगा तब तक भारत का विकास संभव नहीं हो सकेगा। इसमें सरकार की योजनाएं अत्यंत सफल एवं सार्थक सिद्ध हो रही हैं। संजय अभिज्ञान द्वारा प्रस्तुत लेख हमारी भारतीय संस्कृति का वास्तविक रूप प्रस्तुत करता है। होली का त्योहार ग्रामीणों के लिए रास–रंग का त्योहार होता है जिसको सभी लोग रंग–जाति–धर्म के भेदभाव को मिटाकर एक मूल में बंधकर मनाते हैं। 'सूचना के प्रसार में ग्रंथालयों की भूमिका' लेख अत्यंत सारगर्भित रहा। 'रोजगार' के अंतर्गत सुनीता प्रसाद का प्रयास सार्थक है। आज महिलाएं अपने हाथों से मेहनत कर धनार्जन तो कर ही रहीं हैं साथ में उनमें अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता एवं स्वावलंबन की भावना जाग्रत हो रही है जिसमें परिवार की अनेक समस्याओं का समाधान होता दिखाई दे रहा है। कहानी एवं गीत, दोहे भी अच्छे रहे।

दिलीप कुमार जायसवाल
ग्राम+पोस्ट चिरैयाकोट (बागदासी)
जिला मऊ, (उ.प्र.) 276129

काबिलेतारिफ

कुरुक्षेत्र का नियमित पाठक हूं इसलिए मुझे ग्रामीण क्षेत्रों से संबंधित समकालीन उपलब्धियों के विषय में जानकारी प्राप्त होती रहती है। मार्च 2004 का अंक विशेष था जिसमें अनिल बंसल का लेख "ग्रामीण और कृषि विकास से बदलेगी अर्थव्यवस्था की तस्वीर" ग्रामीण क्षेत्र के युवा बेरोजगारों के लिए अपना रोजगार शुरू के लिए एक प्रेरणा साबित होगा। उसी प्रकार वेद प्रकाश अरोड़ा ने अपने लेख 'सुविधाओं की बौछार, कार्यों की भरमार' में यात्री सुविधाएं सर्वोपरि तथा राष्ट्रीय रेल विकास योजना, नई वार्षिक अस्थायी एवं रोजगार के नए अवसर तथा सुदूर क्षेत्र रेलसंपर्क योजना को दर्शाने का जो प्रयास किया, वह वास्तविक रूप में एक सराहनीय कार्य है। डा. नीना गुप्ता का लेख किसानों और अंसगठित श्रमिकों के लिए दो नई योजनाएं भी तारीफ के काबिल हैं क्योंकि इन्होंने कृषि आमदनी बीमा योजना तथा असंगठित श्रमिक सामाजिक सुरक्षा योजना को दर्शाया है। संजय जी ने "ग्रामीण भारत का अपना त्योहार" में जो चर्चा की है वह वास्तविक रूप से अच्छी है क्योंकि शहरों और ग्रामीण क्षेत्रों की होली में 'आकाश और जमीन' का अंतर दिखाई देता है। लेख 'गांव की होली' भी काफी अच्छा है क्योंकि इन्होंने भी अपनी कलम से किसान संस्कृति पर्व होली को दर्शाया है। इसी तरह से अभिनय कुमार शर्मा का लेख "महिला कल्याण हेतु राज्यों द्वारा किए गए प्रयास" भी सराहनीय है। इसमें महिलाओं से संबंधित कई तरह की योजनाओं को दर्शाया गया जो ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाली महिलाओं के लिए लाभदायक विषय है। अभिषेक पाटनी की कहानी 'सॉलिटेरियन' काफी अच्छी थी। प्रेरक प्रसंग में 'विलक्षण सहृदयता' तथा गीत–दोहे, लेखक चंद्रेश कुमार के द्वारा प्रस्तुत योजना परिचय में युवाओं के लिए विकास योजनाएं भी काफी ज्ञानवर्द्धक स्तंभ थे।

सुजीत कुमार
"शान्ति निकेतन", आर.एम.एस. कॉलोनी
उर्दू बाजार, पो. भागलपुर सिटी,
जिला भागलपुर, 812002 (बिहार)

विकास की दौड़ में किसान

मार्च अंक में अनिल बंसल जी का कृषि विकास पर लेख में भारतीय कृषि व्यवस्था की आधारभूत कमियों को निरूपित करते हुए सरकार द्वारा इसके विकास के समन्वित कार्यक्रमों की विस्तृत जानकारी दी गई, जो निश्चत ही बहुत लाभप्रद् है। इसके अतिरिक्त किसानों को विकास की मुख्यधारा में शामिल करने का संकल्प और भारी–भरकम योजनाओं के प्रचार से इतर हमें यह भी देखना होगा कि समाज के अंतिम पायदान पर बैठे व्यक्ति को इसका लाभ कहां तक मिल सका। इसका भी अवलोकन समय–समय पर इसी *कुरुक्षेत्र* के माध्यम से आप करेंगे तो निश्चित ही इन लेखों की सार्थकता होगी।

संदीप कुमार
कोड़ा जहानाबाद, जि. फतेहपुर, उ.प्र.

सदस्यता कूपन

मैं/हम **कुरुक्षेत्र** का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/ चाहती हूं/ चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 70 रुपये, दो वर्ष के लिए 135 रुपये, तीन वर्ष के लिए 190 रुपये का

(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....

पता .....

.....

पिन .....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग,

पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066

*कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर **निदेशक, प्रकाशन विभाग** को नई दिल्ली में देय हो।*

संपादकीय

एक अनुमान के अनुसार सन् 2025 तक देश की आबादी 1.3 अरब तथा सालाना ताजे पानी की खपत 1,093 अरब घनमीटर हो जाएगी। भारत ही नहीं बल्कि विश्व में भी 8 करोड़ प्रतिवर्ष की गति से बढ़ रही जनसंख्या के लिए सन 2025 तक 50 प्रतिशत अतिरिक्त पानी उपलब्ध कराने के लिए दीर्घकालीन नीतियां अभी से बनानी पड़ेंगी। वर्तमान में देश में बढ़ती आबादी के कारण पानी की खपत निरंतर बढ़ने से प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता धीरे-धीरे कम होती जा रही है और बढ़ते प्रदूषण के कारण स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता में भी भारी कमी आई है।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के समय प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता 5,236 घनमीटर थी जो वर्तमान में घटकर 1,900 से 2,100 घनमीटर के बीच रह गई है। वर्ष 2025 तक प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता घटकर 1500 रह जाने की आशंका है। जल संसाधन मंत्रालय के अनुसार प्रति व्यक्ति 1,700 घनमीटर से कम उपलब्धता को पानी के अभाव का संकेत माना जाता है।

अब जब प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता ही संकट में है तब स्वच्छ पेयजल का सपना तो और कठिन लक्ष्य हो गया है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने भारत को पानी की गुणवत्ता और उपलब्धता के मानकों के आधार पर 120वां स्थान दिया है। हमारे देश के 38 प्रतिशत शहरों में और 82 प्रतिशत गांवों में पानी को शुद्ध करने की व्यवस्था नहीं है। देश के करीब 2 लाख 30 हजार गांव आज भी जल समस्याओं से ग्रस्त हैं। एक अनुमान के अनुसार देश के 10,500 गांवों में अशुद्ध जल की वजह से लगभग एक करोड़ 22 लाख लोग आर्थराइटिस नामक बीमारी से और पांच करोड़ वयस्क और बच्चे अन्य जलजन्य बीमारियों के शिकार हैं। प्रदूषित जल के सेवन से होने वाली बीमारियों पर 500 करोड़ रुपये प्रतिवर्ष से अधिक खर्च हो रहे हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार स्वच्छ पेयजल उपलब्ध होने पर अतिसार में 50 प्रतिशत और हैजे में 90 प्रतिशत तक कमी लाई जा सकती है।

भूजल की समस्या ने भी काफी गंभीर रूप ले लिया है। गुजरात, राजस्थान में जहां 150 से 200 फुट तक पानी मिल जाता था, वहीं अब नए बोरिंग 700 से 1,000 फुट गहराई में किए जा रहे हैं। पंजाब और हरियाणा के ग्रामीण इलाकों में अति जलदोहन के कारण भूजल खतरे के बिंदु तक पहुंच गया है। दिल्ली में भी 200 मीटर तक गहरे ट्यूबवैलों के लिए खुदाई करनी पड़ती है। एक अन्य रिपोर्ट के अनुसार 18 राज्यों में 200 जनपदों के भूजल प्रखंडों में पानी अत्यधिक प्रदूषित होने के कारण पीने के लायक नहीं रहा। परंपरागत जलस्रोतों की स्थिति भी बेहद खराब है। कर्नाटक की 25 हजार झीलें अब मात्र दस हजार तक सिमट गई हैं। मैसूर स्थित 25 हजार तालाब और झीलों में भी 10 हजार के करीब ही शेष बचे हैं। बंगलूर में भी 262 में से 181 तालाब सूख चुके हैं। यही हाल देश के तकरीबन हर क्षेत्र का है। जलसंकट से निपटने के लिए पूरे देश में फिर से तालाबों, झीलों और पोखरों आदि की परंपरा को पुनर्जीवित करना होगा और इन्हें पुनः उपयोग में लाने के लिए जनजागृति लानी होगी। परंपरागत तकनीकों के जरिए जिन्हें स्थानीय लोगों ने स्वयं विकसित किया था, वर्षा के जल का अधिकतम संरक्षण किया जा सकता है। राष्ट्रीय जल नीति 2002 में भी उपलब्ध जल और भूजल के अधिकतम और स्थायी उपयोग के लिए एकीकृत जल संसाधन विकास और प्रबंधन, सुविकसित सूचना प्रणाली के सृजन और जल संरक्षण की पारंपरिक परिस्थितियों पर विशेष जोर दिया गया है।

आज जब हमारा देश ही नहीं संपूर्ण विश्व न केवल प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता की दृष्टि से बल्कि स्वच्छ जल के अभाव की स्थिति से गुजर रहा है, ऐसे में आम आदमी को जल के दुरुपयोग के प्रति संवेदनशील करने की जरूरत है ताकि पानी की बचत हो और उसे व्यर्थ होने से बचाया जा सके। साथ ही, जल प्रबंधन की तरफ विशेष ध्यान देना समय की मांग है। वर्षा के जल को व्यर्थ बहने से बचाने के लिए परंपरागत जलस्रोतों के महत्व पर दोबारा ध्यान देकर सिंचाई व्यवस्था को नया जीवन दिया जा सकता है।

इस अंक में 'रोजगार' के तहत सफेद मूसली की फसल उगाने संबंधी जानकारी दी गई है। वेनिला के निर्यात की बढ़ती संभावनाओं पर भी लेख शामिल है। 'सफलता की कहानी' के अंतर्गत मध्य प्रदेश के मंडला जिले की डिंडोरी तहसील में स्वयंसहायता समूहों की स्थापना की कहानी है। 'स्वास्थ्य-चर्चा' में आधे सिर का दर्द 'माइग्रेन' के कारण और उसका इलाज बताया गया है। साथ ही 'रक्तदान से जुड़े कुछ प्रश्न' और पुस्तक चर्चा भी इस अंक में शामिल हैं।

भारत रत्न
डॉ. बी. आर. अम्बेडकर
(14.4.1891–6.12.1956)

"मेरा आदर्श है मुक्त, समानता और भाईचारे पर आधारित समाज। एक आदर्श समाज गतिशील होना चाहिए और उसे एक हिस्से में हो रहा परिवर्तन, दूसरे हिस्सों तक पहुंचाने वाले माध्यमों से परिपूर्ण होना चाहिए"

–डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

सामाजिक समानता के प्रबल समर्थक और
भारतीय संविधान के निर्माता बाबा साहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर
को उनकी 113वीं जयंती पर कृतज्ञ राष्ट्र की श्रद्धांजलि

डीएवीपी 2004/11

सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

जल संसाधनों का दुरुपयोग और बचाव के उपाय

डा. गणेश कुमार पाठक

यदि जल संसाधनों का अंधाधुंध उपयोग एवं शोषण होता रहा तो भविष्य में सिंचाई के लिए जल उपलब्ध नहीं हो सकेगा। बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकता की पूर्ति के लिए अतिरिक्त कृषि, विद्युत तथा औद्योगिक उत्पादन की आवश्यकता के साथ-साथ अपशिष्ट पदार्थों के निष्कासन के लिए अतिरिक्त प्रवाह की आवश्यकता होगी। परिणामतः नदियों एवं अन्य जलस्रोतों पर कूड़ा-करकट, मलमूत्र आदि अपशिष्ट पदार्थों का भार बढ़ता जाएगा, जो जल प्रदूषण की भयंकर समस्या उत्पन्न कर देगा।

वाराणसी में गिरता गंदा नाला गंगा को प्रदूषित कर रहा है।

हमारी धरती पर अथाह जलराशि विद्यमान है। केलर के अनुसार हमारी धरती पर विद्यमान संपूर्ण जलराशि 1,386 मिलियन किलोमीटर है। उपलब्ध जल संसाधन का उपयोग मुख्य रूप से घरेलू कार्यों, नगरीय, औद्योगिक, ताप–विद्युत उत्पादन, जलविद्युत उत्पादन, सिंचाई, पशुधन तथा अणुसंयंत्रों आदि में किया जाता है। विश्व में विभिन्न कार्यों में जल का वर्तमान उपयोग एवं भविष्य में संभावित उपयोग की मात्रा को तालिका–1 से समझा जा सकता है।

तालिका से स्पष्ट है कि यदि जल संसाधनों का अंधाधुंध उपयोग एवं शोषण होता रहा तो भविष्य में सिंचाई के लिए जल उपलब्ध नहीं हो सकेगा। बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकता की पूर्ति के लिए अतिरिक्त कृषि, विद्युत तथा औद्योगिक उत्पादन की आवश्यकता के साथ–साथ अपशिष्ट पदार्थों के निष्कासन के लिए अतिरिक्त प्रवाह की आवश्यकता होगी। परिणामतः नदियों एवं अन्य जलस्रोतों पर कूड़ा–करकट, मलमूत्र आदि अपशिष्ट पदार्थों का अतिरिक्त भार पड़ेगा, जो जल प्रदूषण की भयंकर समस्या उत्पन्न कर देगा।

तालिका–1

विश्व में स्वच्छ जल का उपयोग (किलोमीटर में)

उपयोग		1970			1980			2005 (संभावित)		
		विदोहित जल	प्रयुक्त जल	अप्रयुक्त जल	विदोहित जल	प्रयुक्त जल	अप्रयुक्त जल	विदोहित जल	प्रयुक्त जल	अप्रयुक्त जल
1.	घरेलू, नगरीय, उद्योग, ताप विद्युत एवं पशुधन उत्पादन	600	130	470	800	430	370	1500	1050	450
2.	सिंचाई	2800	2100	700	3100	2700	400	3950	4000	50 कमी
3.	वर्षा द्वारा सिंचाई	500	500	00	700	700	00	1200	1200	00
4.	नौकागमन एवं जलविद्युत	170	160	10	280	270	10	500	500	00
5.	मत्स्य पालन	65	15	50	100	35	65	175	85	90

स्रोतः– केलर, आर., *दि वर्ल्डर्स फ्रेश वाटर : यसटरडे, टुडे एंड टुमोरो*, एनाल्स, अंक 6, 1986, पृष्ठ 19

जल का उपयोग

भारत में औसत रूप से 1,900 करोड़ घन मीटर जल उपयोग के लिए उपलब्ध है। इस उपलब्ध जल का लगभग 86 प्रतिशत सतही नदियों, झीलों, सरोवरों एवं तालाबों का है। भूमिगत जल का भी पर्याप्त भाग सिंचाई एवं पीने के लिए उपयोग किया जाता है। पीने के साथ–साथ घरेलू कार्यों में भी जल का पर्याप्त उपयोग किया जाता है। भारत में घरेलू उपयोग में लाए जाने वाले जल का विवरण तालिका–2 तथा विभिन्न नगरों में प्रति व्यक्ति/प्रतिदिन जल उपयोग की मात्रा तालिका–3 में दर्शाई गई है।

जल प्रदूषण

जल प्रदूषण की समस्या कोई नई नहीं है। आदिकाल से ही मानव अपशिष्ट पदार्थों को जलस्रोतों में विसर्जित करता चला आ रहा है, किंतु वर्तमान में तीव्र औद्योगीकरण, जनसंख्या वृद्धि, जलस्रोतों का दुरुपयोग, वर्षा की मात्रा में कमी आदि मानवीकृत एवं प्राकृतिक कारणों से जल प्रदूषण की समस्या ने विकराल रूप धारण कर लिया है।

मानव के विभिन्न क्रियाकलापों से जब जल के रासायनिक, भौतिक एवं जैविक गुणों में ह्रास आ जाता है, तो जल प्रदूषित हो जाता है। जल प्रदूषण चार प्रकार का होता है:–

- **भौतिक जल प्रदूषण** : भौतिक जल प्रदूषण से जल की गंध, स्वाद, उष्मीय गुणों में परिवर्तन हो जाता है।
- **रासायनिक जल प्रदूषण** : रासायनिक जल प्रदूषण जल में विभिन्न उद्योगों एवं अन्य स्रोतों से मिलने वाले रासायनिक पदार्थों के कारण होता है।
- **शरीर क्रियात्मक जल प्रदूषण** : जब जल के गुणों में इस तरह का परिवर्तन हो जाए कि उस जल के उपयोग से मानव की क्रियाविधि हानिकारक रूप से प्रभावित होती है तो उसे शरीर क्रियात्मक जल प्रदूषण कहा जाता है।
- **जैविक जल प्रदूषण** : जल में विभिन्न रोगजनक जीवों के प्रवेश के कारण प्रदूषित जल को जैविक जल प्रदूषण कहा जाता है।

जल प्रदूषण के कारण

जल प्रदूषण का सीधा संबंध जल के अतिशय उपयोग से है। नगरों में पर्याप्त मात्रा में जल का उपयोग किया जाता है एवं सीवरों तथा नालियों द्वारा अपशिष्ट जल को जल स्रोतों में गिराया जाता है। जलस्रोतों में मिलने वाला यह अपशिष्ट जल अनेक विषैले रसायनों एवं कार्बनिक पदार्थों से युक्त होता है जिससे जलस्रोतों का स्वच्छ जल भी प्रदूषित हो जाता है। उद्योगों से निःसृत पदार्थ भी जल प्रदूषण का मुख्य कारण है। इसके अतिरिक्त कुछ मात्रा में प्राकृतिक कारणों से भी जल प्रदूषित होता है।

स्पष्ट है कि जल प्रदूषण जल की गुणवत्ता में प्राकृतिक अथवा मानवीकृत परिवर्तन है जो भोजन एवं पशु स्वास्थ्य, उद्योग, कृषि, मत्स्य अथवा मनोरंजन के प्रयोजनों के लिए अप्रयोज्य एवं खतरनाक हो जाता है।

प्राकृतिक स्रोत

प्राकृतिक रूप से जल प्रदूषण जल में भूक्षरण, खनिज पदार्थ, पौधों की पत्तियों एवं ह्यूमस पदार्थ तथा प्राणियों के मलमूत्र आदि मिलने के कारण होता है। जल जिस भूमि पर एकत्रित रहता है, यदि वहां की भूमि में खनिजों की मात्रा अधिक होती है तो वह भी जल में मिल जाते हैं। इनमें आर्सेनिक, सीसा, कैडमियम एवं पारा आदि, जिन्हें विषैले पदार्थ कहा जाता है, यदि इनकी मात्रा अनुकूलतम सांद्रता से अधिक हो जाती है तो ये हानिकारक हो जाते हैं।

मानवीय स्रोत

मानव की विभिन्न गतिविधियों के फलस्वरूप निःसृत अपशिष्ट एवं अपशिष्टयुक्त बहिस्रावों के जल में मिलने से जल प्रदूषित होता है। ये अपशिष्ट एवं अपशिष्टयुक्त बहिस्राव निम्नांकित रूप में प्राप्त होते हैं:–

- घरेलू बहिस्राव; वाहित मल; औद्योगिक बहिस्राव; कृषि बहिस्राव; उष्मीय या तापीय प्रदूषण; तेल प्रदूषण; रेडियो/ एक्टिव अपशिष्ट एवं अवपात।

घरेलू बहिस्राव

घरेलू अपशिष्टों से युक्त बहिस्राव को 'मलिन जल' कहा जाता है। विभिन्न दैनिक घरेलू कार्यों यथा खाना पकाने, स्नान करने, कपड़े

तालिका–2

घरेलू उद्देश्यों के लिए जल का उपयोग

उद्देश्य	जल उपयोग प्रतिदिन/ली./प्रति व्यक्ति
पानी पीने में	2.3 लीटर
खाना बनाने में	4.5 लीटर
धार्मिक कार्य	18.5 लीटर
रसोईघर के बर्तनों की सफाई के लिए	13.6 लीटर
कपड़ों की धुलाई के लिए	13.6 लीटर
शौचालय के लिए	27.3 लीटर
स्नान के लिए	27.3 लीटर

स्रोतः– इंडियन स्टैंडर्ड इंस्टीट्यूट इनफारमेशन।

तालिका–3

भारत के प्रमुख नगरों में जल का उपयोग

नगर	जल उपयोग लीटर/प्रति व्यक्ति/प्रतिदिन
मुंबई	320
पुणे	275
हैदराबाद	205
कानपुर	205
कोलकाता	190
चेन्नई	160
इलाहाबाद	125
मथुरा	120
आगरा	115
पटना	115
वाराणसी	115
भोपाल	100
ग्वालियर	90
लखनऊ	90
बंगलौर	90

स्रोतः– हुसैन, एस.के. "क्वालिटी ऑफ वाटर सप्लाई एंड सैनिटरी इंजीनियरिंग", 1975, पृष्ठ 99

धोने एवं अन्य सफाई कार्यों में विभिन्न पदार्थों का उपयोग किया जाता है, जिन्हें अपशिष्ट पदार्थों के रूप में घरेलू बहिस्राव के साथ नालियों में बहा दिया जाता है, जो अंततः जलस्रोतों में जाकर गिरता है। इस तरह के बहिस्राव में सड़े हुए फल एवं सब्जियां, रसोई घरों से निकली चूल्हे की राख, विभिन्न तरह का कूड़ा–करकट, कपड़ों के चिथड़े, अपमार्जक पदार्थ, गंदा जल एवं अन्य प्रदूषणकारी अपशिष्ट पदार्थ होते हैं, जो जलस्रोतों से मिलकर जल प्रदूषण का कारण बनते हैं। वर्तमान में सफाई के कार्यों में संश्लेषण प्रक्षालकों का प्रयोग दिन प्रतिदिन तीव्र गति से बढ़ता जा रहा है, जो जलस्रोतों से मिलकर जल प्रदूषण का स्थायी कारण बनते हैं।

वर्तमान समय में हमारी जनसंख्या एक अरब से ऊपर पहुंच गई है। इसमें से लगभग 30 प्रतिशत जनसंख्या समुद्रतट से 100 किलोमीटर क्षेत्र के अंदर निवास करती है। इस आधार पर यह अनुमान लगाया गया है कि भारत में महानगरों की घरेलू गंदगी प्रतिदिन/प्रति व्यक्ति 120 लीटर होती है। समुद्रतटीय भागों की जनसंख्या द्वारा भी प्रतिदिन लगभग 60 लीटर प्रतिव्यक्ति की दर से घरेलू गंदगी का स्राव होता है। इस तरह अपने देश में प्रतिवर्ष लगभग 4.1 किमी. घरेलू गंदगी निकलती है। भारत के पूर्वी तट पर लगभग 25 करोड़ गैलन गंदा बेकार जल प्रतिदिन छोड़ा जाता है। गंगातट पर स्थित नगरों से प्रतिदिन 5 लाख टन गंदा जल गंगानदी में मिलाया जाता है।

वर्ष 1970 में विश्व में घरेलू उपभोग एवं औद्योगिक उपभोग से निःसृत बेकार पानी की मात्रा 91,45,000 दस लाख टन थी जो वर्ष 2005 तक 94,70,000 दस लाख टन हो जाने की संभावना है।

वाहित मल

वास्तव में जल प्रदूषण शब्द का प्रयोग जल के मानव विष्ठा द्वारा संदूषण के संदर्भ में ही सर्वप्रथम प्रयोग किया गया था। जल में यदि मानव अंतड़ियों में सामान्य रूप से पाए जाने वाले बैक्टीरिया विद्यमान होते थे, उस जल को प्रदूषित जल तथा मानव उपयोग के अयोग्य माना जाता था।

वाहित मल के अंतर्गत मुख्य रूप से घरेलू एवं सार्वजनिक शौचालयों से निःसृत मानव मल को सम्मिलित किया जाता है। वाहित मल में कार्बनिक एवं अकार्बनिक दोनों प्रकार के पदार्थ होते हैं। कार्बनिक पदार्थ की अधिकता से विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीव यथा बैक्टीरिया, प्रोटोजोवा, वायरस, कवक एवं शैवाल आदि तीव्र गति से वृद्धि करते हैं। इस तरह का दूषित वाहित मलजल बिना उपचार किए ही मल नालों से होता हुआ जलस्रोतों में मिलता है तो भयंकर जल प्रदूषण का कारण बनता है। खुले स्थानों में मनुष्य एवं पशुओं द्वारा त्याज्य मल भी वर्षा के जल के साथ बहता हुआ जलस्रोतों में मिलकर जल प्रदूषण का कारण बनता है। इस तरह के जल प्रदूषण को 'जैविक प्रदूषण' कहा जाता है।

उल्लेखनीय है कि एक वर्ष में 10 लाख व्यक्तियों पर 5 लाख टन सीवेज उत्पन्न होता है, जिनका अधिकांश भाग समुद्र एवं नदियों में मिलता है। **एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में एक लाख से अधिक जनसंख्या वाले 142 नगरों में से मात्र 8 ऐसे नगर हैं जिनमें सीवेज को ठिकाने लगाने की पूर्ण व्यवस्था है। 62 ऐसे नगर हैं, जहां अल्प व्यवस्था है एवं 72 ऐसे नगर हैं, जहां इसकी कोई व्यवस्था नहीं है।**

वाहित मल से सबसे अधिक नदी जल प्रदूषित हुआ है। गंगा नदी 15 करोड़ मानव एवं 21 करोड़ पशु वाले क्षेत्र से होकर गुजरती है। गंगातट पर छोटे–बड़े कुल मिलाकर 100 ऐसे नगर हैं जिनका मल–जल गंगा में गिरता

है। इनमें से 27 नगरों की आबादी 1 लाख से ऊपर है। कुछ नगर 10 लाख से अधिक आबादी वाले हैं। ऐसे नगरों में से प्रतिदिन 5 लाख टन गंदा तथा 2,000 टन ठोस कूड़ा–कचरा निःसृत होता है। मात्र दिल्ली नगर द्वारा यमुना नदी में प्रतिदिन 3 लाख 20 हजार टन किलोमीटर मलमूत्र एवं गंदा जल मिलाया जाता है। मुंबई से 180 करोड़ गैलन गंदा जल प्रतिदिन समुद्रों में छोड़ा जाता है। चेन्नई नगर से लगभग 2 करोड़ गैलन गंदगी नदी में मिलती है।

श्रीनगर का 51 हजार किलोमीटर गंदा जल सीधे झेलम नदी में मिलता है। इस गंदे जल के मिलने से इस झील के एक लीटर जल में मात्र 0.1 घन सेमी. आक्सीजन रह गई है, जो वर्ष 1940 में 2.5 घन सेमी. थी।

स्पष्ट है कि वाहित मल–जल प्रदूषण का एक प्रमुख कारण है। तीव्र जनसंख्या वृद्धि के कारण वाहित मल–जल प्रदूषण की समस्या और जटिल होती जा रही है।

औद्योगिक बहिस्राव

प्रायः प्रत्येक उद्योग में उत्पादन प्रक्रिया के पश्चात अनेक अनुपयोगी पदार्थ बचे रह जाते हैं, जिन्हें औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थ कहा जाता है। इनमें से अधिकांश औद्योगिक अपशिष्टों या बहिस्राव में मुख्य रूप से अनेक तरह के धात्विक तत्व एवं अम्ल क्षार, लवण, तेल, वसा आदि विषैले रासायनिक पदार्थ विद्यमान रहते हैं। ये तत्व जल में मिलकर जल को विषैला बनाकर प्रदूषित कर देते हैं।

लुग्दी एवं कागज उद्योग, चीनी उद्योग, वस्त्र उद्योग, चमड़ा उद्योग, शराब उद्योग, औषधि निर्माण उद्योग, खाद्य प्रसंस्करण उद्योग तथा रासायनिक उद्योगों से पर्याप्त मात्रा में अपशिष्ट पदार्थ निःसृत होते हैं जिनका निस्तारण जलस्रोतों में ही किया जाता है और उनमें भी अधिकांश बिना उपचारित किए। अधिकांश औद्योगिक अपशिष्ट कार्बनिक पदार्थ होते हैं, जिनका बैक्टीरिया द्वारा अपघटन होता है किंतु यह प्रक्रिया अत्यंत मंदगति से होती है। फलतः बदबू पैदा हो जाती है एवं अपशिष्ट पदार्थों को वाहित करने वाले नालों का जल प्रदूषित हो जाता है।

एक आकलन के अनुसार वस्तुओं के उत्पादन में प्रयुक्त कुल जलराशि का मात्र 0.2 प्रतिशत ही उद्योगों में प्रयुक्त होता है, जिसका 2 प्रतिशत वाष्पीकृत हो जाता है एवं शेष जलराशि नदियों एवं तालों में प्रवाहित कर दी जाती है। डा. राम आसरे चौरसिया के अनुसार इस अपशिष्ट जलराशि में 8 प्रधान प्रदूषण यौगिक सूक्ष्मजीवों को मार देते हैं।

आर्सेनिक, साइनाइड, पारा, सीसा, जिंक, क्रोमियम, लोहा, तांबा, अम्ल एवं क्षार आदि रासायनिक पदार्थ जल का पी.एच. स्तर अव्यवस्थित कर देते हैं। चर्बी, तेल एवं ग्रीस से मछलियां प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होती हैं। उद्योगों में धातुओं की सफाई, धुलाई, रंगाई, लुग्दी निर्माण, दुग्ध एवं दुग्ध उत्पादों का प्रशोधन, शराब उतारना, धुलाई केंद्र, मोटर सर्विस स्टेशन आदि से बी.ओ.डी. एवं क्षार अधिक मात्रा में जल में मिलते रहते हैं। उद्योगों से निःसृत प्रदूषकों, उनके स्रोतों एवं जल पर पड़ने वाले उनके प्रभाव को तालिका–4 से समझा जा सकता है।

जहां तक भारत में औद्योगिक बहिस्रावों का प्रश्न है तो वह भी कम नहीं है। केरल में पेरियार नदी के निचले किनारे पर रासायनिक खाद, रासायनिक द्रव्य, धातुओं और रेयन के अनेक कारखाने हैं जिनसे सत्रह करोड़ लीटर

तालिका–4

विभिन्न उद्योगों से निःसृत प्रदूषक, स्रोत एवं जल पर उनके प्रभाव (चार्नलेट के अनुसार)

	वर्ण	स्रोत	जल पर पड़ने वाले प्रभाव
1.	बी.ओ.डी. (जीवाणुओं द्वारा अपघटन योग्य पदार्थ)	कार्बोहाइड्रेट, चीनी की सफाई, शराब उतारना, चर्मशोधन, दुग्ध प्रशोधन, लुग्दी एवं कागज, पेयपदार्थ एवं वस्त्र उद्योग	आक्सीकरण, वायु मिश्रण, मत्स्य विनाश एवं दुर्गंध
2.	जहरीले पदार्थ, आरसेनिक साइनाइड, क्रोमियम, कैडमियम तांबा, लोहा, पारा, सीसा, जिंक आदि	धातुओं की सफाई, प्लेट बनाना, अर्क उतारना, शोधन, क्लोरिन उत्पादन, बैटरी बनाना, चर्मशोधन, एवं वस्त्र उद्योग	मछली एवं फ्लेंक्टन विनाश, पशुओं में विष का प्रभाव मछलियों के मांस एवं मानव शरीर में जहरीले तत्वों का एकत्र होना
3.	अम्ल एवं क्षार	कोयले की खानें, नालियां, इस्पात गलाना, वस्त्र रसायन बनाना, ऊन बनाना तथा वस्त्रों की धुलाई	जल का पी.एच. स्तर बिगड़ना, पूर्व पारिस्थितिकीय संतुलन में परिवर्तन
4.	संक्रमण नाराव, क्लोरिन, हाइड्रोजन, पैराक्साइड, फार्मलीन, फेनोल आदि	कागज की सफाई, वस्त्र, पेंसिलीन, गैस, कोक, रंग, रासायनिक उद्योग	सूक्ष्म जीवाणुओं का विनाश, स्वाद बिगड़ना, बदबू
5.	विविध आयन यथा लोहा, कैल्शियम, मैग्नीशियम, क्लोरिन सल्फेट आदि	धातु सीमेंट, कांच एवं चीनी मिट्टी के बर्तन, पंपिग उद्योग	जल की कठोरता, खारेपन एवं अन्य विशेषताओं में परिवर्तन
6.	आक्सीजन अभिकर्ता यथा अमोनिया, नाइट्रोजन डाइ आक्साइड, सल्फर डाइ आक्साइड	गैस एवं कोक, उर्वरक, विस्फोटक, रंग सिंथेटिक, रेशा, लुग्दी सफाई आदि उद्योग	पोषण में आक्सीजन का ह्रास, बदबू, कुछ चुने हुए सूक्ष्म जीवों की वृद्धि
7.	दृश्य एवं गंधदायक पदार्थ	साबुन, चमड़े की रंगाई, खाद्य एवं मांस प्रशोधन ऊनी मिलें, मुर्गीपालन, पेट्रोलियम शोधनशालाएं	तैरते एवं नीचे बैठते पदार्थ, गंदे वस्त्र, तेल, चर्बी, ग्रीस, मछलियों का मांस, हड्डी आदि
8.	रोगजन्य जीवाणु, बैक्टीरिया, फंगी, वायरस	मुर्गीपालन, अपशिष्ट जल, लकड़ी प्रशोधन, चमड़े की रंगाई	मानव पशु एवं पौधों में संक्रामक बीमारियां, प्रदूषित सिंचाई, मानव दृष्टि का खतरा

से भी अधिक रासायनिक द्रव्यों से युक्त रासायनिक अवशेष निःसृत होते हैं, जो पेरियार नदी के जल में मिलकर जल को प्रदूषित कर देते हैं।

मध्य प्रदेश के रतलाम जिले में अल्कोहल संयंत्र से प्रतिदिन 52,000 गैलन विषैला जल निःसृत होता है जो कुरैल नदी में मिलकर जल को प्रदूषित कर चुका है तथा प्रवाह क्षेत्र के 12 किमी. की दूरी तक स्रोतों एवं जलाशयों को दूषित कर रहा है।

भारत की नदियां अपने तटवर्ती क्षेत्रों में स्थित चमड़े, रसायन एवं इस्पात के कारखाने से निःसृत अपशिष्ट से प्रदूषित हो चुकी हैं। इन नदियों में कृष्णा, कावेरी, गोदावरी आदि मुख्य हैं। दामोदर नदी बोकारो एवं सीकरी के रासायनिक एवं धातुओं के कारखानों से प्रदूषित हो चुकी है।

गंगा एवं यमुना नदी के किनारे स्थित उद्योगों के अपशिष्ट के द्वारा इन नदियों का जल प्रदूषित हो गया है। कानपुर, इलाहाबाद एवं वाराणसी में उद्योगों से निःसृत अपशिष्ट पदार्थ से गंगा नदी जल का अधिकांश भाग प्रदूषित हो चुका है। कानपुर में चमड़े के कारखानों के कचरे के गंगा नदी में गिरने से 10 किलोमीटर दूर किशनपुर गांव तक गंगा नदी के जल का रंग ही बदल चुका है। इलाहाबाद के पास फुलपुर में इफ्को रासायनिक खाद के कारखाने से निःसृत 5,500 घनमीटर अपशिष्ट जल गंगा नदी में मिलता है जिससे 16 किलोमीटर की दूरी तक मछलियां मरी पाई गई हैं।

बिहार में तेलशोधक कारखानों के अपशेष गंगा में मिलने से मुंगेर के पास गंगा में वर्ष 1968 में आग लग गई थी। राज्य के लगभग 53 उद्योगों द्वारा उत्पन्न गंदे जल की सड़ांध से दूर–दूर तक के क्षेत्रों में कृषि नहीं हो पा रही है।

हुगली नदी का मुहाना तो कोलकाता नगर के चर्तुदिक स्थापित 150 प्रमुख उद्योगों के अपशिष्टों से भरा रहता है। यहां 87 जूट मिलें, 12 कपड़ा मिलें, 7 चर्मशोध नालियों, 5 कागज एवं लुग्दी के कारखाने तथा 4 शराब के कारखाने के अतिरिक्त 361 नालों से शहर का गंदा जल निरंतर नदी में गिरता रहता है। जिससे यहां के जल–जीवों का नामोनिशान तक मिटता जा रहा है।

कृषि बहिस्राव

वर्तमान समय में फसलों से अधिक उत्पादन प्राप्त करने हेतु कृषि में अनेक तरह की नई–नई पद्धतियों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। हरितक्रांति इसी की देन है। कृषि में नई–नई पद्धतियों के चलते एक ओर सिंचाई में वृद्धि हुई है वहीं दूसरी तरफ रासायनिक उर्वरकों, अपतृणनाशकों एवं कीटनाशक दवाओं का प्रयोग तीव्र गति से बढ़ा है। कृषि के इन नए प्रयोगों से जहां एक ओर उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि हुई है, वहीं इस सफलता की कीमत वातावरण के ह्रास विशेषतया जल प्रदूषण से चुकानी पड़ी है।

दोषपूर्ण कृषि पद्धतियों से भूक्षरण में अत्यधिक वृद्धि हुई है, जिससे नदियों का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है तथा नदी तल भी ऊंचा होने लगता है। झीलें धीरे–धीरे पटकर समतल स्थिति में पहुंच जाती हैं। कीचड़ मिट्टी के जमाव से जल भी प्रदूषित हो जाता है।

कृषि बहिस्राव के अंतर्गत जल प्रदूषण का दूसरा कारण बढ़ता हुआ रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग है। अधिकांश उर्वरक अकार्बनिक फास्फेट एवं नाइट्रोजन हैं। इन उर्वरकों के

प्रेरक प्रसंग

प्रकृति का अमूल्य उपहार पानी

घटना उस समय की है जब सुशीला नायर गांधी जी की निजी सहायक (पारिवारिक) के रूप में सहायता करती थी। एक बार वह गंगा के किनारे यात्रा के समय बापू के साथ थी। यात्रा के दौरान ही समय पर बापू दातुन–कुल्ला कर रहे थे, तभी उन्हें लगा कि पानी कम है। उन्होंने सुशीला को आवाज लगाई तथा पानी लाने को कहा। सुशीला को यह पता नहीं था कि पानी क्यों मांगा है। वह एक बाल्टी पानी भर कर ले आई। बापू ने हाथ–मुंह धो लिए। तभी सुशीला जी ने आव देखा न ताव और बचा हुआ पानी वहीं बिखेर दिया। इस पर बापू नाराज हुए पर वात्सल्यवश बोले कुछ नहीं। बापू और सुशीला जी के संबंध पिता–पुत्री के समान थे। वह कई बार बापू के साथ बातचीत को गंभीरता से न लेकर हंसी में उड़ा देती थी। उधर बापू बचा हुआ पानी बिखेर देने से नाराज और इधर सुशीला जी गंगा जी से एक बाल्टी और पानी भर कर लाई तथा इनके सामने ही उसे भी बिखेर दिया और मुंह बनाकर बोली– 'एक बाल्टी पानी और लाकर बिखेरूं क्या?' अब तो बापू चुप न रह सके तथा बोले– 'बेटी, तुम्हें पानी इस प्रकार नहीं बिखेरना चाहिए, पानी को कियासत से काम में लो, सुशीला जी चौंकी – 'बापू.... पास ही तो गंगा भी बह रही है, आप तो पग–पग पर कंजूसी का पाठ पढ़ाते हैं, ऐसा भी कहीं होता है? बापू बोले– 'बेटी, पानी प्रकृति की ओर से मिला मानव मात्र के लिए ही नहीं, वरन् पशु–पक्षी तथा वनस्पति के लिए भी अमूल्य उपहार है। इसे व्यर्थ नहीं गंवाना है, सोच–समझकर जरुरत के अनुसार ही काम में लो, नल संयम से बरतो। जब भोजन, वाणी–व्यवहार आदि में संयम का महत्वपूर्ण स्थान है, तो पानी के उपयोग में भी संयम बरता जाना चाहिए।

कहते हैं, इसके बाद सुशीला जी ने पानी के दुरुपयोग की किसी शिकायत का मौका बापू को नहीं दिया। आज जब पानी की कमी और उपलब्धता की कठिनाई की आवाज चारों ओर गूंज रही है तो क्या इस घटना से कोई लाभ नहीं उठाया जा सकता, उपभोक्ताओं को पानी के प्रति सजग नहीं किया जा सकता है? धैर्य के साथ विचार कीजिए कि इस क्षेत्र में आपका क्या योगदान हो सकता है। ❑

डा. जमनालाल बायती
बी–186, डॉ. राधाकृष्णन नगर,
भीलवाड़ा (राज.)

अत्यधिक प्रयोग से 'सुपोषण' की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। सुपोषण से तात्पर्य नाइट्रेट एवं फास्फेट जैसे पोषक पदार्थों द्वारा जल के अत्यधिक समृद्धिकरण से उत्पन्न स्थिति से है। सुपोषण की स्थिति में वृद्धि से जल प्रदूषित होने लगता है। खेतों में डाला गया अतिरिक्त उर्वरक धीरे–धीरे जल के साथ बहकर नदियों, पोखरों एवं तालाबों में पहुंच जाता है। नाइट्रोजन के अधिक मात्रा में जल विशेषतया झील में पहुंचने से झील में 'डयूट्रोफिकेशन' की प्रक्रिया तीव्र हो जाती है। फलतः जल में शैवाल की तीव्रता से वृद्धि होती है और शैवाल के मृत होने से उनके अपघटक बैक्टीरिया भारी संख्या में उत्पन्न होते हैं। इनके द्वारा जैविक पदार्थों के अपघटन की प्रक्रिया में जल में आक्सीजन की मात्रा बहुत कम हो जाती है। फलतः जलीय जीवों की कमी होने लगती है और जल प्रदूषित होने लगता है। सुपोषण के फलस्वरूप नदियां धीरे–धीरे पहले अनूप एवं बाद में साद्वल में बदल जाती हैं। सुपोषण का सबसे उत्तम उदाहरण डल झील है। विश्व प्रसिद्ध यह झील सुपोषण की प्रारंभिक अवस्थाओं से गुजरते हुए प्रदूषण की तरफ अग्रसरित हो गई है। इस झील का दक्षिणी–पूर्वी भाग मल अपशिष्ट विसर्जन एवं कृषि जल अपवाह के मिलने से तीव्र गति से संदूषित हो रहा है। कृषि बाहस्राव के अंतर्गत जल प्रदूषण का सबसे उत्तरदायी कारण अपतृणनाशक एवं कीटनाशक दवाओं का तीव्र गति से बढ़ता प्रयोग है। अधिकतर कीटनाशक पारा, सीसा, क्लोरिन, फ्लोरिन, फास्फोरस, आर्सेनिक जैसे विषैले पदार्थों से तैयार किए जाते हैं।

किसी भी पेयजल में कीटनाशकों की मात्रा जल सहनशक्ति सीमा से अधिक हो जाती है तो वह जल प्रदूषित हो जाता है। विभिन्न कीटनाशकों की सहनशक्ति सीमा तालिका–5 से स्पष्ट है।

उल्लेखनीय है कि वर्तमान समय में प्रायः प्रत्येक जगह पर पेयजल में सहनशक्ति की उपर्युक्त सीमा पार हो गई है, जिससे जल विषैला होकर प्रदूषित हो गया है। ज्ञातव्य है कि धरातलीय एवं अपधरातलीय जलप्रवाह उर्वरकों एवं कीटनाशकों का परिवाहक है। वर्षा का जल उर्वरकों एवं कीटनाशकों के रसायनों को नदियों एवं औद्योगिक जल में मिला देता है जिससे नदी जल एवं औद्योगिक जल भी प्रदूषित हो जाता है।

कीटनाशक दवाओं में डी.डी.टी. का प्रयोग सबसे अधिक होता है। लगभग 5 खरब किलो डी.डी.टी. पृथ्वी के जल एवं वायुमंडल में परिसंचारित हो रही है। **एक आकलन के अनुसार विकसित देशों में कीटनाशकों के प्रयोग से लगभग 4 लाख लोग जहर से प्रभावित हो रहे हैं, जिनमें से 20 प्रतिशत भारतीय हैं। भारत में विगत 30 वर्षों के दौरान कीटनाशकों का प्रयोग 11 गुना बढ़ा है।** एफ.ए.ओ. के एक आकलन के अनुसार कीटाणुनाशक रसायनों के फैले जहर से विश्व में प्रतिवर्ष लगभग 10,000 लोगों की मृत्यु हो रही है।

उष्मीय या तापीय प्रदूषणः विभिन्न उत्पादक संयंत्रों में विभिन्न रिएक्टरों के अतितापन के निवारण के लिए नदी एवं तालाबों के जल का उपयोग किया जाता है। शीतलन प्रक्रिया के फलस्वरूप उष्ण हुआ यह जल पुनः जलस्रोतों में मिलाया जाता है। इस तरह के उष्ण जल से जलस्रोतों के जल के ताप में हानिकारक वृद्धि हो जाती है।

उद्योगों के अतिरिक्त वाष्प अथवा परमाणु शक्तिचालित विद्युत उत्पादक संयंत्रों द्वारा भी उष्मीय प्रदूषण होता है। ऊर्जा संयंत्रों में द्रवणित्रों के शीतलीकरण के लिए पर्याप्त प्राकृतिक जल का उपयोग किया जाता है।

उष्मीय प्रदूषण का विशेष प्रभाव जलजीवों पर पड़ता है। बड़े जीव 35° से 40° सें.ग्रे. से अधिक तापमान सहन नहीं कर पाते हैं। जल के तापमान में वृद्धि हो जाने से आक्सीजन की घुलनशीलता में भी कमी आ जाती है तथा लवणों की मात्रा में वृद्धि होती है। लामांट सी. कुले के अनुसार उष्मीय प्रदूषण के प्रभाव से जीवाणुओं के शरीर पर अनेक भौतिक, रासायनिक परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगते हैं तथा जीव संरचना में व्यापक बदलाव आ जाता है।

तैलीय प्रदूषण : विभिन्न औद्योगिक संयंत्रों से नदी एवं अन्य जलस्रोतों में तेल एवं तैलीय पदार्थों के कारण अमरीका की क्वाहोगा नदी एवं भारत के बिहार राज्य में मुंगेर के पास तेलशोधन कारखाने के तैलीय अपशिष्ट के गंगा में मिलने से आग लग चुकी है।

समुद्रों में तो तेल प्रदूषण की संभावना अधिक रहती है। कारण कि तेलवाहक जहाजों से तेल समुद्र में रिसता है तथा जहाजों के दुर्घटनाग्रस्त हो जाने से तो भयंकर आग लग जाती है। एक आकलन के अनुसार विभिन्न कारणों से प्रतिवर्ष पेट्रोलियम के लगभग 50 लाख टन से 1 करोड़ टन उत्पाद समुद्र में मिलते हैं।

रेडियोएक्टिव अपशिष्ट एवं अवपातः परमाणु विस्फोटों से असंख्य रेडियोएक्टिव कण वायुमंडल में दूर–दूर तक फैल जाते हैं एवं बाद में अवपात के रूप में धीरे–धीरे धरातल पर गिरते रहते हैं और विभिन्न कारणों से अंततः जलस्रोतों में जा मिलते हैं और भोजन शृंखला के द्वारा मानव शरीर में पहुंच जाते हैं। जलस्रोतों में मिलकर ये रेडियोएक्टिव पदार्थ जल को विषैला बना देते हैं। चूंकि रेडियोएक्टिव कणों का विघटन बहुत धीमी गति से होता हैं, अतः जल में इनका प्रभाव बहुत दिनों तक कायम रहता है।

जल प्रदूषण ज्ञात करने के मानदंडः किसी भी जल की पहचान के लिए कुछ ऐसे मानदंड निर्धारित किए गए हैं जिनकी कमी या अधिकता होने पर जल को प्रदूषित माना जा सकता है। इन मानदंडों को तीन उपवर्गों में विभक्त

तालिका–5

पेयजल में कीटनाशकों की सहनशक्ति सीमा

कीटनाशक	अधिकतम सह्यसीमा (मिग्रा./लीटर)
इंड्रिन	0.001
एल्ड्रिन	0.017
लिंडेन	0.056
डी.डी.टी.	0.042
टोक्साफीन	0.005
हेप्टाक्लोर	0.018
डाइएल्ड्रिन	0.017

किया जा सकता है:

भौतिक मानदंड : इसके अंतर्गत तापमान, रंग, प्रकाशवेधता, संवहन (तैरते एवं घुले) एवं कुल ठोस पदार्थ आते हैं।

रासायनिक मानदंडः इसके तहत घुला आक्सीजन, बीओडी (बायलोजिकल डिमांड), सी.ओ.डी. (केमिकल आक्सीजन डिमांड), पी. एच.मान, क्षारीयता/ अम्लीयता, भारी धातुएं, मरकरी, सीसा, क्रोमियम एवं रेडियोधर्मी पदार्थ आते हैं।

जैविक मानदंड : इसके अंतर्गत बैक्टीरिया, कोलिफार्म, एलगी एवं वायरस आते हैं। उपर्युक्त प्रदूषकों की जल में एक निश्चित सीमा होती है। इस सीमा से अधिक मात्रा बढ़ने पर जल प्रदूषित होने लगता है।

जल प्रदूषण की स्थिति

अपने देश में जल प्रदूषण इतना विकराल रूप धारण कर चुका है कि अब देश में लगभग 2,600 नगरीय क्षेत्रों में से मात्र 200 क्षेत्रों एवं 5,76,000 ग्रामीण क्षेत्रों में से मात्र 64,000 क्षेत्रों में ही सामान्य से कुछ अच्छा जल पीने हेतु उपलब्ध है। नेशनल एनवायरमेंट इंजीनियरिंग एंड रिसर्च इंस्टीट्यूट के वैज्ञानिकों के अनुसार भारत में उपलब्ध जल का लगभग 70 प्रतिशत जल प्रदूषित हो चुका है। **योजना आयोग के अनुसार "उत्तर की डल झील से लेकर दक्षिण की पेरियार एवं चेलियार नदी तक, पूरब में दामोदर एवं हुगली से लेकर पश्चिम की ठाणा उपनदी तक पानी के प्रदूषण की स्थिति एक–सी भयानक है। जल प्रदूषण के मामले में देश का जल कश्मीर से कन्याकुमारी तक एक–सा हो चला है।"**

उद्योगों के गंदे पानी से होने वाले जल प्रदूषण से लगभग चार गुना जल प्रदूषण हमारी बस्तियों एवं नगरों से निःसृत गंदे जल से होता है। इनसे निकलने वाला अधिकांश जल बिना उपचारित किए ही जलस्रोतों में गिरा दिया जाता है।

समस्याएं

जल प्रदूषण का प्रभाव जलीय जीवन एवं मनुष्य दोनों पर पड़ता है। जलीय जीवन पर जल प्रदूषण का प्रभाव पादपों एवं जंतुओं पर परिलक्षित होता है। औद्योगिक अपशिष्ट एवं बहिस्राव में विद्यमान अनेक विषैले पदार्थ जलीय जीवन को नष्ट कर देते हैं।

जल प्रदूषण का भयंकर परिणाम राष्ट्र के स्वास्थ्य के लिए एक गंभीर खतरा है। एक अनुमान के अनुसार भारत में होने वाली दो तिहाई बीमारियां प्रदूषित पानी से होती हैं। जल प्रदूषण का प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर जल द्वारा जल के संपर्क से एवं जल में उपस्थित रासायनिक पदार्थों द्वारा पड़ता है। पेयजल के साथ रोगवाहक बैक्टीरिया, वायरस, प्रोटोजोवा एवं कृमि मानव शरीर में पहुंच जाते हैं और हैजा, टाइफाइड, शिशु प्रवाहिका, पेचिश, पीलिया, अतिसार, यकृत, एक्जीमा, जियार्डियता, नारू, एनकायलो स्टोमिएसेन, स्ट्रांजिवाइडियोसिस, लेप्टोस्पाइरोसिस जैसे भयंकर रोग उत्पन्न हो जाते हैं। जबकि जल में उपस्थित रासायनिक पदार्थों द्वारा कोष्ठबद्धता, उदरसूल, ब्रिक्कशोध, मणिबंधपात एवं पादपात जैसे भयंकर रोग मानव में उत्पन्न हो जाते हैं। साथ ही जल के साथ ही रेडियोधर्मी पदार्थ भी मानव शरीर में प्रविष्ट कर यकृत, गुर्दे एवं मानव मस्तिष्क पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में पेचिश से होने वाली मृत्यु दर क्रमशः 9.6 एवं 16.5 प्रति हजार व्यक्ति है।

जल प्रदूषण का गंभीर परिणाम समुद्री जीवों पर भी पड़ता है। उद्योगों के प्रदूषणकारी तत्वों के कारण अधिक मात्रा में मछलियों का मर जाना और समुद्र के निचले भाग के जीव–जंतुओं का बर्बाद हो जाना देश के अनेक भागों में एक आम बात हो गई है। मछलियों के मरने का मतलब है प्रोटीन के एक उम्दा स्रोत का नुकसान एवं उससे भी अधिक भारत के लाखों मछुआरों की आजीविका छिन जाना।

एक आकलन के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष पानी के कारण होने वाली बीमारियों की वजह से 7 करोड़ 30 लाख जीवन नष्ट हो रहे हैं। दूषित जल से होने वाली बीमारियों के इलाज का खर्च एवं उनसे होने वाली हानि का अंदाजा लगभग 600 करोड़ रुपये वार्षिक आंका गया है।

जल प्रदूषण का दुष्प्रभाव कृषि भूमि पर भी पड़ रहा है। जिस कृषियोग्य भूमि से होकर प्रदूषित जल गुजरता है, उस भूमि की उर्वरता को नष्ट कर देता है। जोधपुर, पाली एवं राजस्थान के अन्य बड़े नगरों के रंगाई–छपाई उद्योग से निःसृत दूषित जल लगभग 1 करोड़ 50 लाख लीटर प्रतिदिन की दर से मिलकर इन नदियों के किनारे स्थित गांवों की उपजाऊ भूमि को नष्ट कर रहा है। एक आकलन के अनुसार 3 से 10 हजार हेक्टेयर उपजाऊ कृषि भूमि इस विषैले रंगीन जल का शिकार हो गई है। हरे–भरे खेतों में फैल रहा यह बंजरपन रेगिस्तान को भी आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

यही नहीं प्रदूषित जल द्वारा जब सिंचाई होती है तो उसका दुष्प्रभाव कृषि उत्पादन पर भी पड़ता है। कारण कि जब गंदी नदियों या नहरों के गंदे जल (दूषित जल) से सिंचाई की जाती है तो अन्न उत्पादन के चक्र में धातुओं का अंश प्रवेश कर जाता है, जिससे कृषि उत्पादन में 17 से 30 प्रतिशत तक की कमी हो जाती है। इस तरह जल प्रदूषण से उत्पन्न उपर्युक्त समस्याओं के विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रदूषित जल से उस स्रोत का संपूर्ण जल पारिस्थितिकीय तंत्र ही अव्यस्थित हो जाता है।

बचाव

जल प्रदूषण की रोकथाम हेतु सबसे आवश्यक बात यह है कि हमें जल प्रदूषण को बढ़ावा देने वाली प्रक्रियाओं पर ही रोक लगा देनी चाहिए। इसके तहत किसी भी प्रकार के अपशिष्ट या अपशिष्टयुक्त बहिस्राव को जलस्रोतों में मिलने नहीं दिया जाना चाहिए।

घरों से निकलने वाले मलिन जल एवं वाहित मल को एकत्रित कर संशोधन संयंत्रों में पूर्ण उपचार के बाद ही जलस्रोतों में विसर्जित किया जाना चाहिए। पेयजल के स्रोतों जैसे तालाब, नदी इत्यादि के चारों तरफ दीवार बनाकर विभिन्न प्रकार की गंदगी के प्रवेश को रोका जाना चाहिए। जलाशयों के आसपास गंदगी करने, उनमें नहाने, कपड़े धोने आदि पर भी रोक लगानी चाहिए।

नदी एवं तालाब में पशुओं के नहलाने पर भी पाबंदी होनी चाहिए। उद्योगों को सैद्धांतिक रूप से जलस्रोतों के निकट स्थापित नहीं होने देना चाहिए। इसके अतिरिक्त पहले से ही जलस्रोत के निकट स्थापित उद्योगों को

अपने अपशिष्ट जल को बिना उपचार किए जलस्रोतों में विसर्जित करने से रोका जाना चाहिए।

कृषि कार्यों में आवश्यकता से अधिक उर्वरकों एवं कीटाणुओं के प्रयोग को भी कम किया जाना चाहिए। जहां रोक लगाना संभव न हो, वहां इनका प्रयोग नियंत्रित ढंग से किया जाना चाहिए।

समय–समय पर प्रदूषित जलाशयों में उपस्थित अनावश्यक जलीय पौधों एवं तल में एकत्रित कीचड़ को निकालकर जल को स्वच्छ बनाए रखने के लिए प्रयास किए जाने चाहिए। कुछ जातिविशेष की मछलियों में यह गुण होता है कि ऐसी मछलियां मच्छरों के अंडे, लार्वा तथा जलीय खरपतवार का भक्षण करती हैं। फलतः जल में ऐसी मछलियों के पालने से जल की स्वच्छता कायम रखने में सहायता मिलती है।

जनसाधारण के बीच जल प्रदूषण के कारणों, दुष्प्रभावों एवं रोकथाम की विधियों के बारे में जागरूकता बढ़ानी चाहिए ताकि जल का उपयोग करने वाले लोग जल को कम से कम प्रदूषित करें या प्रदूषित न करें तथा संरक्षण करें।

जल प्रदूषण नियंत्रण कानून

जल प्रदूषण के नियंत्रण हेतु समय–समय पर सरकार द्वारा जल प्रदूषण नियंत्रण कानून बनाए गए हैं, जो निम्नांकित हैं–

1. **जल (प्रदूषण निरोधक एवं नियंत्रण अधिनियम), 1974**

   यह अधिनियम 23 मार्च, 1974 को लागू किया गया। इसके अंतर्गत एक केंद्रीय जल प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड गठित किया गया है और भारत के सभी राज्यों में इस तरह के बोर्ड गठित किए जा चुके हैं। जल प्रदूषणमंडलों द्वारा निम्नांकित दशाओं में कार्य किया जा रहा है–

   - नदी एवं अन्य जलाशयों के प्रदूषण का सर्वेक्षण।
   - औद्योगिक बहिस्राव विसर्जन की निगरानी।
   - प्रदूषित जल की उपचार की सस्ती विधियों का विकास।
   - स्थानीय संस्थानों एवं उद्योगों को जल प्रदूषण नियंत्रण के बारे में परामर्श देना।
   - पर्यावरण संबंधी अनुसंधान।
   - प्रदूषण के प्रति सार्वजनिक चेतना जागृत करना।

2. **जल कर (प्रदूषण नियंत्रण एवं निरोधन) अधिनियम, 1979**

   इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य जल प्रदूषण नियंत्रण के लिए निधि एकत्रित करना एवं जल संसाधनों का संरक्षण करना है।

3. **पर्यावरण (रक्षण) अधिनियम, 1980**

   इस अधिनियम के मुख्य उद्देश्य निम्नांकित हैं–

   - जल, वायु एवं भूमि प्रदूषण नियंत्रण।
   - संकटकारी अपशिष्ट पदार्थों की व्यवस्था।
   - प्रदूषणकारी विधियों की सुरक्षा।

जल प्रदूषण एवं नियंत्रण अधिनियम 1974 के अंतर्गत कुछ ऐसे अनुच्छेद हैं जिनके तहत नगरपालिकाओं को जल प्रदूषण रोकने के अधिकार दिए गए हैं। ये अनुच्छेद हैं–

अनुच्छेद 192 (1) – शहर की नाली, नदी का अन्य जलराशि में कूड़ा–करकट, गंदगी फेंकना निषिद्ध है।

अनुच्छेद 200 – निर्धारित घाटों को छोड़कर धोबियों द्वारा अन्य स्थानों पर कपड़ा धोना निषिद्ध है।

अनुच्छेद 201 – नदी, पोखर, तालाब आदि को स्नान से गंदा करना तथा उसमें गंदी वस्तुएं डालना निषिद्ध है। किंतु ये अधिनियम तब तक कारगर नहीं होंगे, जब तक इनका सख्ती से पालन न किया जाए और आम नागरिक एवं उद्योगों के मालिक, जिन्हें इन कानूनों का पालन करना है, में जल प्रदूषण दूर करने के प्रति चेतना न आ जाए। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इन कानूनों का पालन करने हेतु सख्ती से निबटा जाए और पालन न करने वालों के विरूद्ध सख्त कार्यवाही की जाए।

स्वयंसेवी संस्थाओं की भूमिका

अपने देश में जल प्रदूषण को दूर करने एवं जल प्रदूषण से उत्पन्न समस्याओं का समाधान करने के लिए न केवल हमारी सरकार ही प्रयत्नशील है, बल्कि देश के विभिन्न भागों में कार्यरत स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा भी जनचेतना जागृत करने एवं जनजागरण द्वारा जल प्रदूषण रोकने का सराहनीय कार्य किया जा रहा है।

1957 में स्थापित मलयालम शास्त्र साहित्य समिति द्वारा जल प्रदूषण रोकने में महत्वपूर्ण कार्य किए जा रहे हैं। केरल शास्त्र साहित्य परिषद के केरल में लगभग 4,000 से अधिक सक्रिय सदस्य एवं 250 शाखाएं हैं। इस परिषद के कार्यक्रमों को गांवस्तर पर क्रियान्वित करने हेतु 600 ग्रामीण विज्ञान मंच बनाए गए हैं, जिनके माध्यम से लोगों में विज्ञान एवं जल प्रदूषण निवारण के प्रति चेतना जागृत की जाती है।

1971 में मध्य प्रदेश के होशंगाबाद शहर में स्थापित 'नर्मदा बचाओ अभियान समिति' तथा वाराणसी में 'संकटमोचन फाउंडेशन' का 'गंगा बचाओं कार्यक्रम' तथा 'स्वच्छ गंगा अभियान समिति' का कार्यक्रम सराहनीय रहा है। इन समितियों द्वारा जल प्रदूषण रोकने हेतु लोगों में चेतना जागृत की जा रही है तथा अनेक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

भागलपुर, शहडोल, बुरहानपुर, ग्वालियर, बेलगांव, गोवा, गंजाम, गोरखपुर सहित अनेक नगरों में भी ग्रामीणों, मछुआरों, छात्रों एवं पत्रकारों तथा शिक्षकों द्वारा भी जनचेतना जागृत की जा रही है। 'गोरखपुर एंवायरमेंटल एक्शन ग्रुप' इस दिशा में सराहनीय कार्य कर रहा है।

जयपुर की प्रसिद्ध पिछोला झील, तथा पुष्कर की प्रसिद्ध झील, जो जलकुंभी से पट चुकी थी, वहां के स्वयंसेवी उत्साही युवकों ने साफकर झील को पुनः रमणीय बना दिया है।

तात्पर्य यह है कि **सरकारी कानूनों एवं माध्यमों की अपेक्षा हमारी ये स्वयंसेवी संस्थाएं जल प्रदूषण निवारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। आज प्रत्येक गांव एवं प्रत्येक नगर में ऐसी स्वयंसेवी संस्थाओं की आवश्यकता है जो जल प्रदूषण की रोकथाम एवं जल संरक्षण में अपनी भूमिका निभाकर जल को प्रदूषित होने से बचाकर राष्ट्र के स्वास्थ्य की रक्षा कर सकें,** अन्यथा वह दिन दूर नहीं जब हमें न केवल पीने के लिए अपितु स्नान करने, कृषि कार्य, उद्योगधंधों अथवा किसी भी कार्य हेतु स्वच्छ जल उपलब्ध नहीं हो पाएगा और संपूर्ण जल पारिस्थितिकीय तंत्र अव्यवस्थित हो जाएगा। ❑

रीडर, भूगोल विभाग,
पी.जी. कॉलेज, दूबेछपरा,
बलिया (उ.प्र.)

भारत में बढ़ता जलसंकट

जगनारायण
मधु ज्योत्सना

एक ओर इजराइल जैसे 25 सेमी. औसत वार्षिक वर्षा वाले देश में जल का कोई अभाव नहीं है तो दूसरी ओर 114 सेमी. औसत वार्षिक वर्षा वाले हमारे देश में प्रति वर्ष किसी भाग में सूखा अवश्य पड़ता है। देश में जल की उपलब्धता और उसके स्वरूप के अनुसार समुचित जलप्रबंधन न होने के कारण ही वर्षा का जल नदी-नालों में तेजी से बहकर समुद्र में चला जाता है जिससे वर्षा के बाद के लगभग नौ महीने देश के लिए पानी की कमी के होते हैं। ये ही मूल कारण हैं देश में जलीय अभाव के, जिसे हम उचित प्रबंधन के द्वारा ही नियंत्रित कर सकते हैं।

फोटो : सर्वेश

आजादी के 57 वर्षों बाद भी आज देश में काला हांडी जैसी हालत, भूख से मौतें, सूखे और बाढ़ से बर्बादी यही संकेत देती हैं कि देश में पानी की उपलब्धता बेहद अव्यवस्थित है और उसके प्रबंधन का व्यापक अभाव है। एक ओर इजराइल जैसे 25 सेमी. औसत वार्षिक वर्षा वाले देश में जल का कोई अभाव नहीं है तो दूसरी ओर 114 सेमी. औसत वार्षिक वर्षा वाले हमारे देश में प्रति वर्ष किसी भाग में सूखा अवश्य पड़ता है। इनमें से भी राजस्थान, गुजरात, सौराष्ट्र, उड़ीसा आदि प्रांत नियमित रूप से सूखे की मार झेलते रहते हैं।

हमारा देश विश्व का सातवां बड़ा देश है जहां 32,87,782 वर्ग किमी. क्षेत्र में 106 करोड़ से ज्यादा मनुष्य तथा दुनिया के सर्वाधिक पशु निवास करते हैं। इसमें 28 प्रतिशत लोग शहरों और 72 प्रतिशत लोग अब भी 5,55,137 गांवों में ही निवास करते हैं। **आज हमारे देश के 2,31,000 गांव जल समस्याओं से ग्रस्त हैं। इन गांवों के चारों ओर लगभग 1.6 किमी. तक सतही जल उपलब्ध नहीं है और यदि कहीं है भी तो वह उपयोग के लायक ही नहीं रह गया है। भारत में एक ओर जहां चेरापूंजी में 118.70 सेमी. वर्षा होती है वहीं राजस्थान के कुछ हिस्सों में मात्र 10 मिली. या इससे भी कम वर्षा होती है। वर्षा के इस असमान वितरण से ही देश का 16 प्रतिशत हिस्सा नियमित रूप से सूखे की चपेट में रहता है** वहीं असम, उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल सहित देश के कई भाग बाढ़ की चपेट में रहते हैं। भारत में नियमित सूखे के लिए जहां कम वर्षा जिम्मेदार है वहीं बाढ़ के लिए अधिक वर्षा उत्तरदायी है।

हमारे देश को प्रति वर्ष वर्षा से लगभग 400 बिलियन क्यूबिक मीटर जल की प्राप्ति होती है। इसका 75 प्रतिशत भाग हमें मानसून

तालिका–1

जनसंख्या तथा जल उपलब्धता के मामले में भारत की स्थिति

वर्ष	जनसंख्या (करोड़)	जल की उपलब्धता (घनमीटर प्रतिवर्ष प्रतिव्यक्ति)
1947	40	5000
2000	100	2000
2025*	139	1500
2050*	160	1000

* अनुमानित

तालिका–2

विभिन्न क्षेत्रों में होने वाली जल की खपत

क्षेत्र	1990		2000		2025*	
	घन किलोमीटर	कुल खपत का प्रतिशत	घन किलोमीटर	कुल खपत का प्रतिशत	घन किलोमीटर	कुल खपत का प्रतिशत
कृषि	460	83.3	630	84.0	770	73.3
घरेलू	25	4.5	33	4.4	52	4.9
उद्योग	15	2.7	30	4.0	120	11.4
ऊर्जा	19	3.4	27	3.6	71	6.76
अन्य	33		30		37	
कुल	552		750		1050	

* अनुमानित

तालिका–3

सन् 2050 में आंकी गई जल की संभावित खपत

क्षेत्र	खपत		
	सतही जल	भूजल	कुल
कृषि	463	344	807
घरेलू	65	46	111
उद्योग	57	24	81
ऊर्जा	56	14	70
अन्य	91	–	91
कुल	**732**	**428**	**1160**

तालिका–4

विभिन्न महानगरों में उत्पादित तथा उपचारित अपशिष्ट जल की मात्रा

महानगर का नाम	उत्पादित अपशिष्ट जल की मात्रा (मिलियन गैलन प्रतिदिन)	उपचारित अपशिष्ट जल की मात्रा (मिलियन गैलन प्रतिदिन)	उपचारित जल का प्रतिशत
दिल्ली	359	280	78.0
मुंबई	490	3	0.6
चेन्नई	61	38	62.3
कोलकाता	304	152	50.0
हैदराबाद	77	25	32.4
बंगलौर	82	63	76.8

के मात्र तीन महीनों में ही प्राप्त होता है। इसमें से भी अधिकांश वर्षा का जल हमें मात्र 100 घंटों में ही प्राप्त हो जाता है। वर्षा से प्राप्त इस जल का अधिकांश भाग तेजी से बहकर समुद्र में चले जाने और तेज तापमान से वाष्पीकृत होने से व्यर्थ चला जाता है। भारत के उत्तर में हिमाच्छादित हिमालय की चोटियों से निकलने वाली गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र जैसी सदावाहिनी नदियां हैं, जिनसे प्रचुर मात्रा में जल की प्राप्ति होती है। वर्षाकाल में इनमें जल की अधिकता हो जाती है जिससे इनमें बाढ़ आ जाती है।

देश में जल की उपलब्धता और उसके स्वरूप के अनुसार समुचित जलप्रबंधन न होने के कारण ही वर्षा का जल नदी–नालों में तेजी से बहकर समुद्र में चला जाता है जिससे वर्षा के बाद के लगभग नौ महीने देश के लिए पानी की कमी के होते हैं। ये ही मूल कारण हैं देश में जलीय अभाव के, जिसे हम उचित प्रबंधन के द्वारा ही नियंत्रित कर सकते हैं।

हमारे देश में जल प्रचुर मात्रा में होने के बावजूद उपयुक्त संचयन व्यवस्था एवं रखरखाव के अभाव में स्थिति दिन–प्रतिदिन बद से बदतर होती जा रही है। स्थिति यह है कि जल जैसी आवश्यक वस्तु दिनोंदिन दुर्लभ होती जा रही है, फिर भी लोग बिना सोचे–समझे अंधाधुंध जल के उपयोग में लगे हैं। जल के बढ़ते अभाव का सर्वाधिक प्रभाव बच्चों और महिलाओं पर पड़ता है क्योंकि दैनिक उपयोग के लिए इन्हें ही दूर से ढोकर पानी लाना पड़ता है। वास्तव में भारत में जलापूर्ति व्यवस्था अकुशलता के दुष्चक्र में फंसी है जिसे सभी क्षेत्रों की जलापूर्ति और वितरण प्रणालियों में देखा जा सकता है।

स्थिति की समीक्षा से आने वाले दिन काफी संकटपूर्ण दिखाई पड़ते हैं। 1997 में देश के कुल क्षेत्रों में जहां 552 अरब घनमीटर पानी की मांग थी, 2025 तक उसके 1050 घनमीटर हो जाने की संभावना है। जल क्षेत्र के लिए मांग की यह बढ़ोतरी कृषि क्षेत्र में कम और कृषियेत्तर क्षेत्र में अधिक होगी। आजादी के समय देश की आबादी 40 करोड़ से भी कम थी। उस समय देश के प्रत्येक व्यक्ति के हिस्से 5,000 घनमीटर पानी था। आज प्रत्येक भारतीय के हिस्से पानी की मात्रा 2,000 घनमीटर से भी कम पड़ रही है। (तालिका–1)।

जलघटाव का यह सिलसिला यदि यों ही

पृथ्वी का अमृत संकट में

प्राचीन भारतीय आधार ग्रंथों में गंगाजल का बहुत गुणगान हुआ है। आधुनिक काल के देशी–विदेशी अनेक वैज्ञानिकों ने भी गंगाजल को अपनी जांच में विलक्षण गुणों से युक्त पाया है। गोमुख के बर्फीली इलाके से निकलकर मैदानों की ओर आने के पूर्व इस देव नदी में हिमालय में पाई जाने वाली अनेक रोगनिवारक वनस्पतियों और खनिज तत्वों का समावेश होता है। वैज्ञानिक प्रयोगों से यह बात प्रमाणित हो चुकी है कि गंगा के गतिशील जल में अशुद्धियों को निष्क्रिय करने की अद्भुत क्षमता है।

1922 में इंग्लैंड के सम्राट एडवर्ड सप्तम के राजतिलक समारोह में जाते समय जयपुर नरेश सवाई माधोसिंह (द्वितीय) अपने साथ हरिद्वार से संग्रहित गंगाजल को चांदी के दो कलशों में भरकर ले गए थे। चालीस साल के बाद जब 1962 में इसे खोला गया तो यह गंगाजल बिल्कुल स्वच्छ मिला। 1983 में यूनेस्को के एक वैज्ञानिक दल ने हरिद्वार में गंगाजल के परीक्षण में पाया कि गंगा में शव और अन्य प्रदूषक तत्वों से मात्र कुछ ही फीट नीचे का जल पूरी तरह शुद्ध था। एक अन्य परीक्षण के दौरान अच्छी तरह छाने गए गंगाजल में मिलाए गए 5,500 जीवाणु मात्र तीन घंटे में ही खत्म हो गए, वहीं 'कुएं' के पानी में मिलाए गए 8,500 जीवाणु 49 घंटे में बढ़कर 15,000 हो गए। आप जानना तो चाहेंगे कि ऐसा क्यों हुआ क्योंकि गंगा के जल में **'बैक्टीरियोफाज'** (वायरस) पाया जाता है। यह गंगाजल में आने वाले विषाणुओं को नष्ट कर देता है। यही कारण है कि लंबे समय तक संग्रहित रखने के बाद भी गंगाजल प्रदूषित नहीं होता और उसमें कीड़े नहीं पड़ते। गंगाजल की यह विशेषता उसमें पाए जाने वाले बैक्टिरियोफाज के कारण ही होती है। गंगा जल में बैक्टिरियोफाज की उत्पत्ति गोमुख हरिद्वार के बीच पाई जाने वाली गुणकारी वनस्पतियों और खनिज तत्वों के कारण ही है।

कल–कल करता गोमुख से निकला यह दैवी जल जब हिमालय की विशिष्ट गुणकारी खनिज संपदाओं से युक्त पाषाणखंडों से टकराकर उन गुणकारी संपदाओं को अपने अंक में समाहित कर लेता है तब इसकी गुणवत्ता में चमत्कारिक परिवर्तन आ जाता है जिससे गंगा का जल अन्य नदियों और सामान्य जल की तुलना में विशेष गुणों वाला औषधितुल्य हो जाता है। गंगा के जल की इन्हीं विशेषताओं के कारण ही भारतीय समाज में इसे देवनदी का दर्जा प्राप्त हुआ है। गंगाजल की ये विशेषताएं यह प्रमाणित करती हैं कि **'यदि जल पृथ्वीवासियों का जीवन है तो गंगाजल साक्षात अमृत है।'**

बदलते हुए परिवेश में हमारी प्राथमिकताओं में जो बदलाव आए उसके कारण हमने पवित्र नदी गंगा को उपभोक्तावादी दृष्टि से देखना आरंभ कर दिया। हमने देवनदी को बांधकर जहां उसके प्रवाह को बाधित किया वहीं गंगा में भयावह विषाक्त औद्योगिक अवजल, शहरों का मलजल गिराकर उसके स्वरूप को भी विकृत कर दिया जिसके चलते आज मैदानी इलाके में इस देवनदी का मौलिक स्वरूप बुरी तरह संक्रमित होकर विषाक्त हो गया है। गंगा के तट पर स्थित कानपुर, प्रयाग, काशी, पटना और कोलकाता जैसे महानगरों में गंगाजल प्रदूषित होकर विषाक्त हो गया है। हाल ही में प्रयाग उच्च न्यायालय के आदेशानुसार काशी के सभी घाटों के गंगाजल के वैज्ञानिक परीक्षण की रिपोर्ट में बताया गया कि किसी भी घाट का पानी छूने के काबिल भी नहीं रह गया है, पीने और स्नान करने की बात तो कल्पना से भी परे है। हमारी भोगवादी प्रवृत्तियों के चलते आज स्थिति यहां तक पहुंच गई है कि सरस्वती की तरह गंगा भी विनाश के मुहाने पर खड़ी दिखती है। यदि समय रहते हमने इसकी रक्षा के उपाय नहीं किए तो सरस्वती की तरह गंगा भी लुप्त हो जाएगी और तब गंगा का हरा–भरा मैदान थार के मरुस्थल जैसा ही रेगिस्तान बन जाएगा और हमारी सभ्यता और संस्कृति को विलीन होने से कोई नहीं बचा सकेगा। ❑

चलता रहा तो भारतीय नदियों में केवल ब्रह्मपुत्र, बराक, ताप्ती से कन्याकुमारी तक पश्चिम में बहने वाली नदियों में ही पर्याप्त पानी रह पाएगा। देश की अन्य नदियां जलाभाव से सूख जाएंगी।

पानी के संबंध में एक अन्य विसंगतिपूर्ण तथ्य यह है कि यहां पानी की उपलब्धता को मापने के लिए केवल पृथ्वी की ऊपरी सतह के जल को ही महत्व दिया जाता है जबकि भारत में भूमिगत जल का विशेष स्थान है। यहां एक अरब आबादी की खाद्यसुरक्षा भूमिगत जलस्रोतों पर ही अवलंबित है। 80 प्रतिशत ग्रामीण पेयजल के लिए भूमिगत जल पर ही निर्भर हैं एवं उद्योगों की 50 प्रतिशत पानी की भी जरूरत भूमिगत पानी से ही पूरी होती है। भारत में हुई हरितक्रांति में भी फसलों की सिंचाई का मुख्य साधन भूमिगत जल ही है। आज देश के 50 प्रतिशत सिंचित क्षेत्रों में लगभग 1.7 करोड़ पंप कार्यरत हैं। वर्षा के अभाव वाले वर्षों में सिंचाई के लिए हम पूरी तरह इन्हीं पंपों पर ही निर्भर रहते हैं। (तालिका–2)

खेती में भूजल के बढ़ते उपयोग से भूजल का तल तेजी से नीचे खिसक रहा है। भूजल के अतिदोहन के कारण अनेक क्षेत्रों में स्थिति विषम हो गई है। तालिका–3 से भूजल और सतही जल की खपत की स्थिति स्पष्ट है।

जल उपलब्धता ह्रास के साथ ही जल प्रदूषण एक और भयावह समस्या है जिससे सतही और भूमिगत दोनों ही जल क्षेत्र प्रभावित हैं। जल की गुणवत्ता में गिरावट की समस्या से देश के सभी प्रांत ग्रस्त हैं। कृषि क्षेत्र में बढ़ते कीटनाशकों एवं रासायनिक खादों के प्रयोग ने भूमिगत और सतही दोनों जल क्षेत्रों को बेहद प्रभावित किया है। औद्योगिक और घरेलू कचरे के साथ ही शहरी मलजल से हमारी नदियों, झीलों, तालाबों, नालों के साथ ही समुद्र का जल भी बुरी तरह प्रभावित होने लगा है। तालिका–4 से देश के प्रमुख महानगरों के मल–जल एवं अवजल के उपचारण की स्थिति स्पष्ट हो जाती है।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि आने वाले दिन पानी की दृष्टि से अत्यंत संकटपूर्ण हैं। यदि समय रहते इसके निराकरण के व्यापक उपाय नहीं किए गए तो आने वाले दिन और भयावह होंगे। ❑

ईशान स्टूडियो
दुकान संख्या–20, श्री विश्वनाथ मंदिर,
काशी हिंदू विश्वविद्यालय,
वाराणसी–221005 (उ.प्र.)

स्वच्छ पेयजल का सपना कब होगा साकार

डा. एस. के. लखेड़ा
संजय ध्यानी

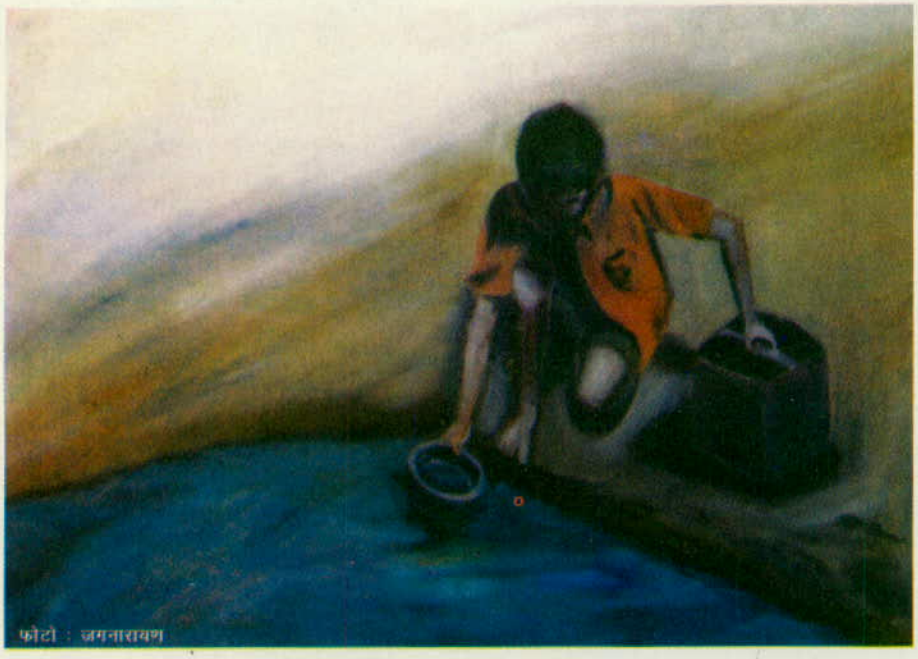

फोटो : जगनारायण

जल संसाधन मंत्रालय के अनुसार प्रति व्यक्ति 1,700 घनमीटर से कम उपलब्धता को पानी के अभाव का संकेत माना जाता है। एक आकलन के अनुसार सन् 2025 तक भारत में प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता 1500 घनमीटर रहने की संभावना है। 2020 तक यदि हमारा देश विकसित राष्ट्रों की सूची में आना चाहता है, तो हमें ऊर्जा एवं अन्य संसाधनों के साथ-साथ प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता भी बढ़ाने के लिए प्रयास अभी से करने चाहिए।

जलसंकट से निपटने का सबसे सस्ता और सुलभ साधन वर्षाजल संरक्षण माना गया है। वर्षाऋतु में लगभग 100 दिनों में 100 घंटे की वर्षा से भारत में औसतन 1,170 मि.मी. वर्षा हो जाती है। इससे अनुमानतः 4,000 अरब घनमीटर वर्षा एवं बर्फ गिरती है। इसमें से हमारे उपयोग में 690 अरब घनमीटर जल नदियों से तथा 432 अरब घनमीटर भूजल से प्राप्त होता है। इस प्रकार बहुत कम उपयोग से अधिकतर वर्षा जल का भाग बहकर समुद्र में मिल जाता है। समुद्र में मिलने से पहले वर्षाजल कृषियोग्य बहुमूल्य उपजाऊ परत का क्षरण करते हुए लगभग 4 करोड़ हेक्टयर भूमि को जलमग्न कर देता है जिससे करोड़ों रुपये की फसल एवं जन–धन की हानि होती है। अतः यदि वर्षा जल की एक–एक बूंद का संरक्षण किया जाए तो हमारा देश बाढ़ एवं सूखा दोनों स्थितियों का मुकाबला करने में सक्षम हो जाएगा।

यदि विश्व में पानी की उपलब्धता को देखें तो पूरे विश्व के लगभग तीन चौथाई भाग में पानी ही पानी है। यह पानी इतना है कि यदि पृथ्वी पर बिछाया जाए तो तीन कि.मी. मोटी पानी की परत बन जाएगी मगर यह सारा पानी खारा है। वैज्ञानिकों के अनुसार मात्र 2.7 प्रतिशत ही मीठा जल है। पानी के असमान वितरण एवं जनसंख्या वृद्धि ने ही जलसंकट को जन्म दिया है। विश्व के 40 प्रतिशत सूखा प्रभावित क्षेत्र में मात्र दो प्रतिशत जल ही उपलब्ध है। इसी प्रकार जनसंख्या में तेजी से हो रही वृद्धि, औद्योगिक एवं कृषि क्षेत्र में बढ़ते पानी के उपयोग से सन् 1900 से अब तक भारत में लगभग 7 गुना एवं विश्व में लगभग 10 गुना अधिक पानी की खपत हो रही है। **एक पुष्ट अनुमान के अनुसार 2025 तक देश की आबादी 1.3 अरब तथा सालाना ताजे पानी की खपत 1,093 अरब घनमीटर हो जाएगी। विश्व में भी 8 करोड़ प्रतिवर्ष की गति से बढ़ रही जनसंख्या के लिए 2025 तक 50 प्रतिशत अतिरिक्त पानी उपलब्ध कराने हेतु दीर्घकालीन नीतियां अभी से बनानी पड़ेंगी।** विश्व में वर्षा जल का औसतन लगभग 1,10,000 घन किलोमीटर जल का अधिकतर भाग व्यर्थ बहने से लगभग 5.3 अरब टन भूमि की बहुमूल्य ऊपरी उपजाऊ परत प्रतिवर्ष भूक्षरण एवं बाढ़ से नष्ट हो रही है जिसमें से

80 लाख टन महत्वपूर्ण जीवाश्म एवं पौध पोषक तत्व प्रतिवर्ष नष्ट हो रहे हैं। अतः वर्षा जल के संरक्षण से स्वच्छ जल के साथ–साथ अमूल्य प्राकृतिक उपजाऊ परत का भी संरक्षण किया जा सकता है।

पानी की खपत निरंतर बढ़ने एवं जनसंख्या वृद्धि के कारण प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता धीरे–धीरे कम होती जा रही है। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के समय प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता 5,236 घनमीटर थी परंतु वर्तमान में यह घटकर 2,100 घनमीटर से कम हो चुकी है। विश्व में इस समय प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता 7,420 घनमीटर एवं एशिया में 3,240 घनमीटर है। जल संसाधन मंत्रालय के अनुसार प्रति व्यक्ति 1,700 घनमीटर से कम उपलब्धता को पानी के अभाव का संकेत माना जाता है। एक आकलन के अनुसार सन् 2025 तक भारत में प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता 1,500 घनमीटर रहने की संभावना है। सन् 2020 तक यदि हमारा देश विकसित राष्ट्रों की सूची में आना चाहता है, तो हमें ऊर्जा एवं अन्य संसाधनों के साथ–साथ प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता भी बढ़ाने के लिए प्रयास अभी से करने चाहिए। यह भी उल्लेखनीय है कि भारत की जनगणना के ताजा आंकड़ों के अनुसार देश में कुल 19.2 करोड़ परिवारों में से मात्र 7.4 करोड़ अर्थात् 38 प्रतिशत परिवारों को ही घर पर पेयजल उपलब्ध है। इनमें से 3.5 करोड़ अर्थात् 65 प्रतिशत परिवार शहरों में रहने वाले तथा 3.9 करोड़ अर्थात् 29 प्रतिशत परिवार ग्रामीण क्षेत्रों से संबंधित हैं। इन आंकड़ों के अनुसार भारत के सबसे अधिक 36.7 प्रतिशत नलों से, 35.7 प्रतिशत हैंडपंप एवं टयूबवैलों से, 18.2 प्रतिशत तालाबों से, 5.6 प्रतिशत कुओं से, 1 प्रतिशत झीलों से, 1 प्रतिशत नदियों से, 0.7 प्रतिशत झरनों से तथा शेष 1.2 प्रतिशत परिवार पानी के लिए अन्य स्रोतों पर निर्भर हैं।

स्पष्ट है कि अधिकतर पानी की आपूर्ति भूमिगत जल से ही हो रही है। विश्व जल सम्मेलन में भी पूरे विश्व में अंधाधुंध एवं अवैज्ञानिक भूजल दोहन से गिरते जलस्तर पर चिंता व्यक्त की गई। भारत में भी विश्व का सर्वाधिक अर्थात् 150 अरब घनमीटर भूजल प्रतिदिन निकाला जा रहा है। सन् 1970 से प्रतिवर्ष लगभग पौने दो लाख टयूबवैल कृषि, घरेलू एवं औद्योगिक मांग के लिए लगाए जा रहे हैं जिनसे सभी भूमिप्रखंडों में भूजल स्तर में गिरावट आना स्वाभाविक है। केंद्रीय भूजल बोर्ड के अनुसार देश के 593 जिलों में से 206 जिलों में भूमिगत जलस्तर अत्यधिक दोहन एवं वर्षा जल द्वारा प्राकृतिक या कृत्रिम पुनर्भरण चक्र के अभाव में रसातल में जा चुका है। **राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, पंजाब एवं हरियाणा के अधिकतर इलाकों में भूमिगत जलस्तर 20 सेंटीमीटर प्रतिवर्ष की दर से गिरता हुआ जल संकट को बढ़ाता ही जा रहा है।** अकेले दिल्ली में दिल्ली जल बोर्ड द्वारा लगभग 1,250 टयूबवैलों से लगातार जलदोहन के कारण कहीं–कहीं तो 200 मीटर तक गहरे टयूबवैलों की खुदाई करनी पड़ती है। इसी प्रकार कोलकाता में 1,300 बोरिंग से निरंतर पानी के दोहन के कारण जलस्तर 40 मीटर तक और गहरा हो गया है। गुजरात, राजस्थान में जहां 150 से 200 फुट तक पानी आसानी से मिल जाता था वहीं अब नए बोरिंग 700 से 1,000 फुट गहराई में किए जा रहे हैं। उत्तर प्रदेश में भी प्रतिवर्ष भूजल 2 से 3 फुट तक गहराता जा रहा है इसीलिए केंद्रीय भूजल बोर्ड ने उत्तर प्रदेश के मैदानी इलाकों में 819 ब्लाकों में से

जल जीवन है

कहीं उमड़ते बादलों के रूप में, कहीं लहराते सागर के रूप में तो कहीं हिमशिखरों पर जमी बर्फ के रूप में पृथ्वी पर जल उपलब्ध है किंतु पृथ्वी पर जल की कुल मात्रा स्थिर और सीमित है। जल जीवन का आधार है। जल द्वारा ही भोजन के पोषक तत्वों को कोशिकाओं तक पहुंचाया जाता है और अपशिष्ट पदार्थ विसर्जित होकर शरीर से बाहर निकलते हैं। मनुष्य के शरीर में मौजूद जल पाचन संस्थान को स्निगधता प्रदान करता है। एक वयस्क मनुष्य के शरीर में शीतोष्ण जलवायु में लगभग 1,200 मि.ली. जल की आवश्यकता होती है और 100 मि.ली. जल मूत्र के रूप में तथा 100 मि.ली. आंत्र विसर्जन के रूप में बाहर निकलता है। शरीर में उपलब्ध जलराशि का संचालन व्यक्ति की प्यास और भूख पर निर्भर करता है। मनुष्य के रक्त के तरल भाग 'प्लाज्मा' में लगभग 90 प्रतिशत जल होता है। शरीर का पानी दो भागों में बंटा होता है : कोशीय जल तथा बाह्यकोशीय जल। घुलनशीलता पानी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण गुण है। इसी के माध्यम से यह रासायनिक उतार–चढ़ाव को संतुलित बनाए रखता है। उसी से ऊष्मा नियंत्रित रहती है तथा शरीर की विच्छिन्नता रुककर शरीर का तापमान सामान्य बना रहता है।

मनुष्य भोजन के अभाव में कई माह जीवित रह सकता है किंतु पानी के अभाव में नहीं। ठंडे कमरे में बिना पसीना बहाए आराम से लेटकर अधिक से अधिक 12 दिनों तक बिना पानी के जीवित रहा जा सकता है। लंबी समुद्री यात्रा में समुद्र के पानी से शरीर को ठंडा रखकर प्यास को टाला जा सकता है, लेकिन प्यास को अधिक समय तक टालना न तो मुमकिन है और न ही सेहत की दृष्टि से उचित। शरीर में पानी के महत्व का पता इसी तथ्य से चलता है कि यदि शरीर में एक निश्चित अनुपात से दस से बीस प्रतिशत पानी कम हो जाए तो आंखें झपकना बंद कर देती हैं, आदमी बोल तक नहीं पाता। बीस प्रतिशत से अधिक पानी की कमी हो जाने पर पसीने के स्थान पर खून की बूंदें निकलने लगती हैं और आदमी की मृत्यु तक हो जाती है। ❑

कैलाश जैन
34, बंदा रोड, भवानीमंडी,
जिला झालावाड़, (राजस्थान)

111 को 'डार्क' एवं 198 को 'ग्रे' जोन की श्रेणी में माना है। यही हाल पंजाब और हरियाणा के ग्रामीण इलाकों का है जहां क्रमशः 60 प्रतिशत व 40 प्रतिशत अति जलदोहन के कारण भूमिगत जल खतरे के बिंदु तक पहुंच चुका है। वर्ष 1995 में लगभग 3.7 करोड़ लोग उन क्षेत्रों में रह रहे थे, जिन्हें 'डार्क' क्षेत्र घोषित किया गया था। यह संख्या 1991 के बाद 20.60 लाख प्रतिवर्ष की दर से बढ़ती जा रही है।

एक तरफ तो पुनर्भरण के अभाव में वर्षा जल यों ही समुद्र में बह जाता है और भूमिगत जलस्तर में अपेक्षित वृद्धि नहीं हो रही है तो दूसरी तरफ सरकार ने भूमिगत जलदोहन के लिए 2007 तक पूर्ण क्षमता के दोहन का लक्ष्य रखा है। इसके लिए विभिन्न सब्सिडी हेतु 30 से 35 बिलियन रुपये प्रतिवर्ष खर्च होने का अनुमान है। इसके साथ ही नए पंपसेटों के लिए बिजली की आवश्यकता 33.5 बिलियन किलोवाट घंटा एवं डीजल की 3.5 बिलियन लीटर आंकी गई है। इसी प्रकार 1980 के मध्य विशिष्ट कृषि नीति के तहत जलदोहन के लिए पंपसेटों की खरीद एवं उर्वरकों, कीटनाशकों हेतु सब्सिडी दी गई। भारतीय किसानों ने परंपरागत, जैविक एवं सस्ते उर्वरकों का प्रयोग बंद करके महंगे रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का प्रयोग जोर–शोर से शुरू कर दिया जिससे एक सीमा तक तो अन्न का उत्पादन तेजी से बढ़ा, मगर लगभग दो दशक बाद उसके दुष्परिणाम सामने आने लगे हैं। एक तरफ तो भूमि को उर्वरकों से ढक दिया और दूसरी तरफ फसलों के शत्रु कीटपतंगों में एक खास तरह की प्रतिरोधक क्षमता का विकास हो गया जिसके कारण जहर की मात्रा हर बार बढ़ानी पड़ रही है।

एक अनुमान के अनुसार कृषि में प्रयुक्त रासायनिक खादों का 50 प्रतिशत अंश फसलों के पोषण, 25 प्रतिशत मिट्टी में मिलकर नाइट्रोजन गैस एवं शेष 25 प्रतिशत मिट्टी में रिस–रिसकर भूमिगत जल को प्रदूषित कर रहा है। पंजाब एवं हरियाणा सहित देश के कई ग्रामीण इलाकों में रासायनिक खादों एवं कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग से भूमिगत जल में प्रदूषण में अप्रत्याशित वृद्धि के संकेत हैं। उल्लेखनीय है कि भारत में प्रति हेक्टेयर उर्वरकों का प्रयोग अमेरिका से 60 प्रतिशत अधिक हो रहा है।

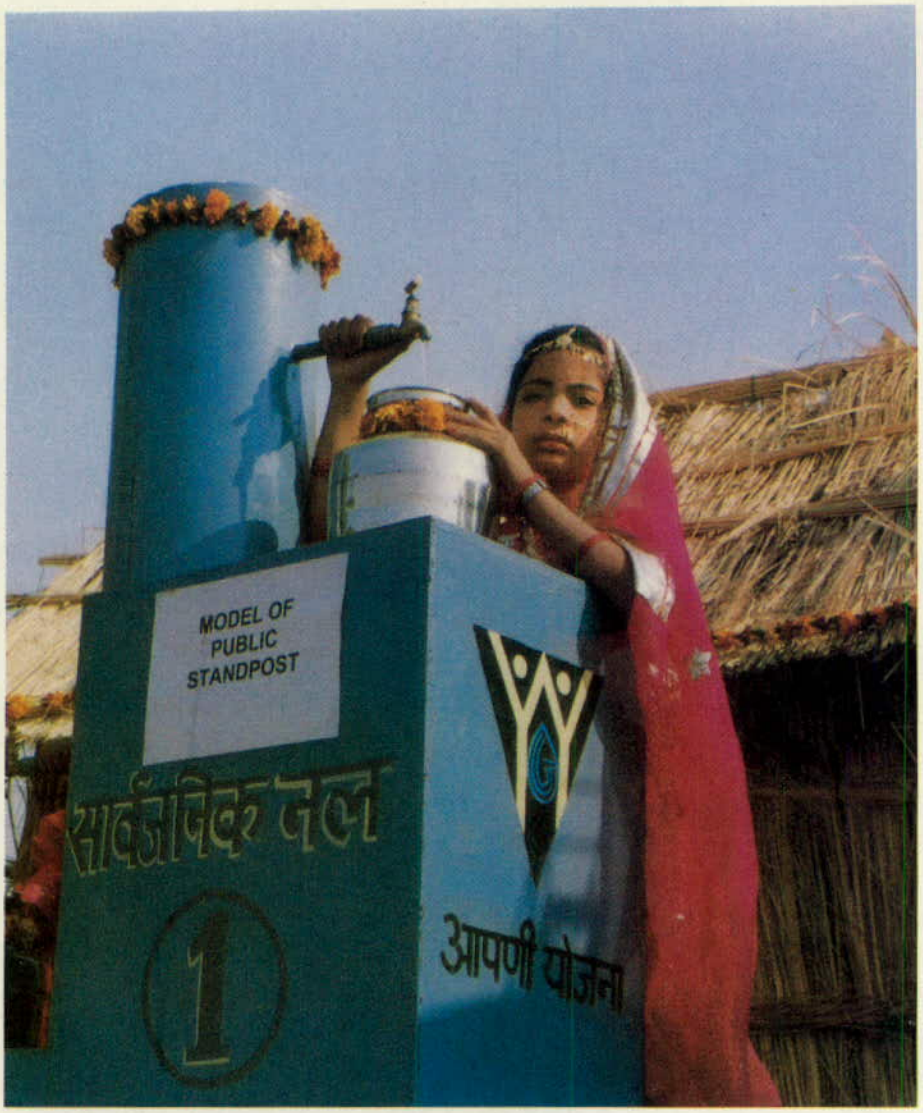

भारत सहित विश्व के अधिकतर देशों के लोग पानी की कमी के साथ–साथ जल में बढ़ रहे प्रदूषण से भी परेशान हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ ने भारत को पानी की गुणवत्ता एवं उपलब्धता के मानकों के आधार पर 120 वां स्थान दिया है। इसी प्रकार वाशिंगटन स्थित वर्ल्ड वाच संस्थान के अनुसार भारत में लगभग 58 फीसदी पेयजल स्वच्छ नहीं है। शहरों में 38 प्रतिशत और गांवों में 82 प्रतिशत स्थानों पर पानी को शुद्ध करने की व्यवस्था उपलब्ध नहीं है। एक अन्य रिपोर्ट के अनुसार भी 18 राज्यों में 200 जनपदों के भूजल प्रखंडों पर पानी अत्यधिक प्रदूषित होने के कारण पीने के लायक नहीं रहा। इसका सबसे बुरा एवं घातक प्रभाव ग्रामीण लोगों के स्वास्थ्य पर पड़ता है। पैसे की कमी के कारण एवं अपेक्षित जागरूकता के अभाव में ये लोग प्रदूषित पेयजल पीने के लिए अभिशप्त हैं। भूजल को मुख्य रूप से प्रदूषित करने वाले कारकों में औद्योगिक विषैले उत्पाद, खेती में बढ़ते कीटनाशक एवं उर्वरक तथा बढ़ती जनसंख्या के द्वारा प्रयुक्त हानिकारक कचरा एवं गंदे नाले ही जिम्मेदार हैं।

भूमिगत जल में रिसने की प्रक्रिया द्वारा लोहा, मैगनीज, क्लोराइड, नाइट्रेट, आर्सेनिक, क्रोमियम, पारा, सीसा, फ्लोराइड, डी.डी.टी. एल्ड्रिन, डाइएल्ड्रिन, हेप्टाक्लोट, वी.एम.सी.

और एंडोसल्फान आदि हानिकारक तत्व पहुंचने लगे हैं। इनके लगातार अधिक मात्रा में प्रयोग से चर्मरोग, हैजा, आंत्रशोध, टाइफाइड, पीलिया, गैस्ट्रोएट्राइटिस, ब्लू बेबी रोग, अस्थि, गुर्दे, यकृतीय एवं स्नायुतंत्रीय संबंधित बीमारियां आदि प्रमुख रूप से पाई जा रही हैं। एक अनुमान के अनुसार अशुद्ध जल की वजह से 10,500 गांवों में लगभग एक करोड़ 22 लाख लोग आर्थराइटिस नामक बीमारी, 5 करोड़ वयस्क एवं बच्चे अन्य जलजन्य बीमारियों से पीड़ित हैं।

प्रदूषित जल के सेवन से होने वाली बीमारियों के इलाज में 500 करोड़ से भी अधिक रुपये खर्च हो रहे हैं। विश्वभर में भी अशुद्ध जल का सेवन करने वाले लगभग 18 प्रतिशत अर्थात एक अरब 10 करोड़ लोग हैं। इसी कारण विश्वभर में लगभग 62 प्रतिशत मौतें प्रदूषित जल के सेवन से हो रही हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार स्वच्छ जल उपलब्ध होने पर 50 प्रतिशत अतिसार एवं 90 प्रतिशत तक हैजा में कमी लाई जा सकती है।

स्वच्छ जल का राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय अभियान तभी सफल हो सकता है जबकि उपलब्ध स्वच्छ पेयजल का प्रबंधन, नियमन एवं वितरण न्यायोचित ढंग से हो तथा वर्षा जल संरक्षण को आम लोगों की भागीदारी से जनांदोलन के रूप में परिवर्तित किया जाए। जल के महत्व को समझते हुए हिंदू धर्मग्रंथों में जल को भगवान विष्णु का साक्षात रूप माना गया है। इसीलिए सभी नदियों, सरोवरों, तालाबों, झीलों को किसी न किसी धर्म के साथ जोड़कर समाज को इनकी पवित्रता एवं संरक्षण की जिम्मेदारी दी गई थी।

भारत विश्व का सबसे प्राचीन वर्षा जलसंग्रहकर्ता था। इसके उदाहरण पुराने खंडहर हो चुके किलों एवं गांवों में आज भी मिलते हैं। परंतु समय बदलने के साथ–साथ हम अपनी पुरानी परंपरागत वर्षा जलसंग्रह तकनीकों को भूलते गए और आज जलसंकट का सामना कर रहे हैं। यही कारण है कि वाटर हारवेस्टिंग की नवीनतम तकनीकों को अपनाने के कारण जैसलमेर एवं जयपुर जैसे शहर, जहां औसत वर्षा 100–200 मि.मी. होती है, लाभान्वित हुए हैं। इसके विपरीत चेरापूंजी, जहां औसत वर्षा 11,000 मि.मी. एवं केरल, जहां औसत वर्षा तीन से चार हजार मि.मी. होती है, इन स्थानों पर वर्षाजल के उचित प्रबंधन के अभाव में जलसंकट बना रहता है।

प्रयोगों से सिद्ध हो चुका है कि लगभग 100 वर्गमीटर की छत से हर वर्ष भूमिगत जलाशयों में 55,000 लीटर पानी वर्षाजल द्वारा पुनर्भरण के काम आ सकता है। अतः आज आवश्यकता है कि देशभर में फैले लाखों तालाबों, पोखरों, झीलों, बावड़ियों, कुंओं, कृत्रिम जलाशयों, तालों, जोहड़ों एवं रजवाहों को साफकर वर्षा जल के पुनर्भरण हेतु तैयार किया जाए।

पूरे देश में तालाबों, झीलों, पोखरों आदि की परंपरा को पुनर्जीवित करना होगा। राष्ट्रीय कृषि आयोग के अनुसार 1950 में लगभग 5 लाख तालाब 36 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई करते थे। मगर वर्तमान में अधिकतर तालाब गाद भरने, अवैध कब्जे व खेल के मैदान बन चुके हैं। **अकेले कर्नाटक में 25,000 झीलें अब मात्र 10,000 तक सिमट कर रह गई हैं। उत्तरांचल में पर्यटन में प्रमुख स्थान रखने वाले नैनीताल की प्रसिद्ध साल्ट लेक जो 80 वर्ग कि.मी. में फैली थी, वर्तमान में आधी से भी कम रह गई है। इसी प्रकार बंगलौर में 262 में से 181 तालाब सूख चुके हैं और मैसूर में 25 हजार तालाब और झीलों में मात्र 10 हजार ही शेष बचे हैं।** देश के अन्य स्थानों पर भी तालाबों, झीलों तथा अन्य वर्षा जल संग्रहकर्ता दयनीय स्थिति में हैं। अतः इन्हें पुनः उपयोग में लाने हेतु जन–जागृति पैदा करनी पड़ेगी।

देश के पहाड़ी क्षेत्रों में वर्षा जल संरक्षण हेतु विशेष उपाय करने होंगे क्योंकि पहाड़ों में भूक्षरण काफी तेजी से होता है। यह वर्षा जल जब पहाड़ी क्षेत्रों के तीव्र ढलानों से मिट्टी एवं गाद के साथ मैदानी इलाकों में प्रवेश करता है, तो तटबंधों को तोड़ता हुआ नदी घाटी क्षेत्रों में बाढ़ लाता है। अतः पहाड़ी क्षेत्रों में ही पानी को रोकने पर भूजल वृद्धि के साथ–साथ वर्षभर नदियों में पानी की आपूर्ति भी बनी रहेगी। इसके लिए पहाड़ी ढलानों पर थोड़ी–थोड़ी दूरी पर खाइयां खोद दी जाती हैं तथा पत्थरों आदि से छोटे–छोटे बांध बनाए जाते हैं ताकि पानी की गति कम होने से हानि कम से कम हो।

पहाड़ी क्षेत्रों में 60 प्रतिशत से अधिक वनों का होना पर्यावरण एवं जल संरक्षण दोनों ही दृष्टि से महत्वपूर्ण है। अतः इन क्षेत्रों में आरक्षित श्रेणी के वनों का प्रतिशत बढ़ाकर वृक्षारोपण पर विशेष बल देना होगा। भारत, पाकिस्तान, अफगानिस्तान और चीन को हिंद कुश हिमालय से निकलने वाली पवित्र स्वच्छ जलधाराओं का उचित बंटवारा करके कुशल प्रबंधन नीति द्वारा जलसंकट से निपटना चाहिए। हिमालय क्षेत्र में स्थित इन विशाल प्राकृतिक स्वच्छ जलटंकियों का संरक्षण करने की आवश्यकता आज सबसे अधिक है क्योंकि यहीं से स्वच्छ जलरूपी जीवनधारा भारतसहित अन्य देशों को भी लाभान्वित करती है।

भारत जैसे विशाल देश में असमान वर्षा वितरण एवं विभिन्न भौगोलिक क्षेत्र के कारण एक तरफ तो बाढ़ की स्थिति बनी रहती है तो दूसरी तरफ सूखा पड़ने से लोग पानी की एक–एक बूंद को तरसते रहते हैं। **अतः बाढ़ एवं सूखा दोनों स्थितियों से एक साथ निपटने में 37 बड़ी नदियों को जोड़ने वाली अति महत्वाकांक्षी महायोजना कारगर साबित होगी। केंद्र सरकार ने इस योजना पर लगभग 5 लाख 60 हजार करोड़ रुपये का खर्च होने का पूर्वानुमान लगाया है।** पूरे देश में 14 नहर मालिकाओं के साथ–साथ तीन विशाल जलग्रिडों से सालभर पूरे देश में पानी की आपूर्ति बनी रहेगी। इसी प्रकार अन्य देशों को भी नदियों में बाढ़ के जल का प्रबंधन एवं वर्षा जल के संरक्षण से जलसंकट का मुकाबला करना चाहिए। ध्यान रहे, बीसवीं सदी में जितने महत्वपूर्ण पेट्रोल उत्पाद रहे, उससे भी कहीं मूल्यवान इक्कीसवीं सदी में स्वच्छ जल की रहने की संभावना है। अतः जल का संरक्षण हर स्तर पर आज से ही करना शुरू करें। ❑

(लेखकद्वय श्रीनगर, गढ़वाल के शिक्षा संकाय हे.न.ब.ग., विश्वविद्यालय में क्रमशः वरिष्ठ प्रवक्ता एवं शोध छात्र हैं।)

परंपरागत जलस्रोतों का महत्व

भारत डोगरा
रेशमा भारती

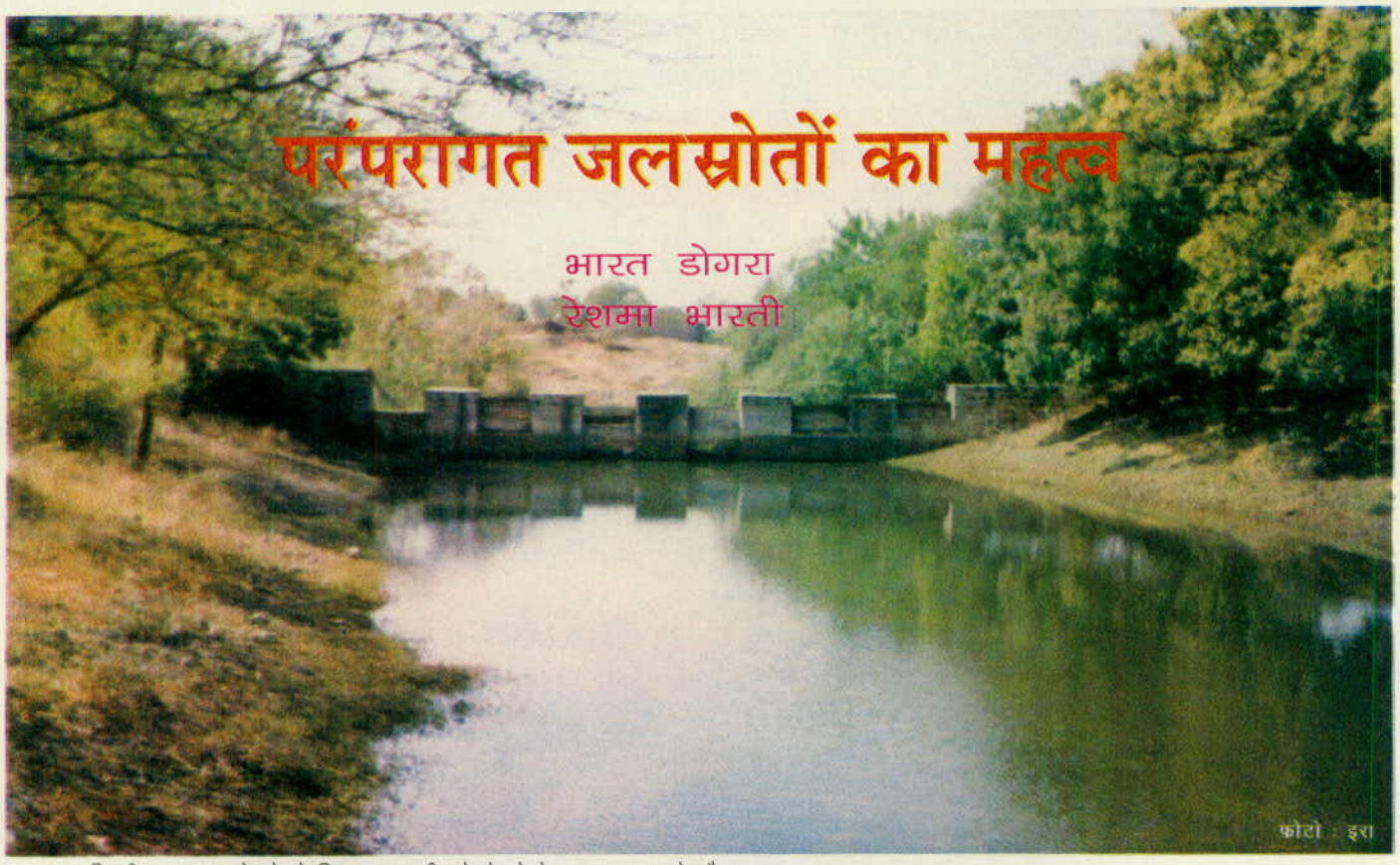

उपजाऊ मिट्टी का बहना रोकने के लिए तथा पानी को रोकने हेतु बनाया गया चेकडैम।

चाहे राजस्थान व बुंदेलखंड के तालाब हों या बिहार की अहर पईन व्यवस्था- इन परंपरागत तकनीकों में कई पीढ़ियों का अनुभव और स्थानीय परिस्थितियों की समझ छिपी है। आज भी हम इनसे बहुत कुछ सीख सकते हैं। इस तरह की कुछ परंपरागत तकनीकों का विवरण यहां दिया जा रहा है।

भारत की भौगोलिक परिस्थितियों में वर्षाजल के संरक्षण का विशेष महत्व है। यूरोप में वर्षा धीरे–धीरे पूरे साल होती रहती है। इसके विपरीत भारत के अधिकतर भागों में वर्ष के 8760 घंटों में से मात्र लगभग 100 घंटे ही वर्षा होती है। इसमें से कुछ समय मूसलाधार वर्षा होती है। कभी–कभी आधी वर्षा मात्र 20 घंटों में ही हो जाती है। अतः स्पष्ट है कि जल संग्रहण और संरक्षण यूरोप के देशों की अपेक्षा भारत जैसे देशों में कहीं अधिक आवश्यक है। भारत की वर्षा की तुलना में यूरोप में वर्षा की सामान्य बूंद काफी छोटी होती है। इस कारण उसकी मिट्टी काटने की क्षमता भी कम होती है। यूरोप में बहुत–सी वर्षा बर्फ के रूप में गिरती है जो धीरे–धीरे धरती में समाती रहती है। भारत में बहुत–सी वर्षा मूसलाधार वर्षा के रूप में गिरती है जिसमें मिट्टी को काटने और बहाने की बहुत क्षमता होती है।

दूसरे शब्दों में, हमारे यहां की वर्षा की यह स्वाभाविक वृत्ति है कि यदि उसके जल के संग्रहण और संरक्षण की उचित व्यवस्था नहीं की गई तो यह जल बहुत–सी मिट्टी बहाकर निकट की नदी की ओर वेग से दौड़ेगा और नदी में बाढ़ आ जाएगी। चूंकि अधिकतर जल न एकत्र होगा न धरती में रिसेगा, अतः कुछ समय बाद जलसंकट उत्पन्न होना भी स्वाभाविक ही है। इन दोनों विपदाओं को कम करने या दूर करने के लिए जीवनदायी जल का अधिकतम संरक्षण और संग्रहण आवश्यक है। इसके लिए पहली आवश्यकता है वन, वृक्ष व हर तरह की हरियाली जो वर्षा के पहले वेग को अपने ऊपर झेलकर उसे धरती पर धीरे से उतारे ताकि यह वर्षा मिट्टी को काटे नहीं अपितु काफी हद तक स्वयं मिट्टी में ही समा जाए या रिस जाए और पृथ्वी के नीचे जल के भंडार को बढ़ाने का अति महत्वपूर्ण कार्य करे।

दूसरा महत्वपूर्ण कदम यह है कि वर्षा का जो शेष पानी नदी की ओर बह रहा है उसके अधिकतम संभव हिस्से को तालाबों या पोखरों में एकत्र कर लिया जाए। वैसे इस पानी को मोड़कर सीधे खेतों में भी लाया जा सकता है। खेतों में पड़ने वाली वर्षा का अधिकतर जल खेतों में ही रहे, इसकी व्यवस्था भू–संरक्षण के विभिन्न उपायों जैसे मेड़बंदी, पहाड़ों में सीढ़ीदार खेत आदि से की जा सकती है। तालाबों में जो पानी एकत्र किया गया है, वह उनमें अधिक समय तक बना रहे, इसके लिए तालाबों के आसपास वृक्षारोपण हो सकता है व वाष्पीकरण कम करने वाले तालाब का विशेष डिजाइन बनाया जा सकता है। तालाब से होने वाले सीवेज का भी उपयोग हो सके, इसकी व्यवस्था हो सकती है। एक तालाब का अतिरिक्त पानी स्वयं दूसरे में पहुंच सके और इस तरह तालाबों की एक सीरीज बन जाए, यह भी कुशलतापूर्वक करना संभव है।

वास्तव में जल संरक्षण के ये सब उपाय हमारे देश की जरूरत के अनुसार बहुत समय से किसी न किसी रूप में अपनाए जाते रहे हैं। चाहे राजस्थान व बुंदेलखंड के तालाब हों या बिहार की अहर पईन व्यवस्था, नर्मदा घाटी की हवेली व्यवस्था हो या हिमाचल की गूलें, महाराष्ट्र की बंधारा विधि हो या तमिलनाडु की एरी व्यवस्था, इन सब माध्यमों से अपने–अपने क्षेत्र की विशेषताओं के अनुसार स्थानीय लोगों ने वर्षा के जल के अधिकतम और बढ़िया उपयोग की तकनीकें विकसित कीं। इन परंपरागत तकनीकों में कई पीढ़ियों का अनुभव और स्थानीय परिस्थितियों की समझ छिपी है। आज भी हम इनसे बहुत कुछ सीख सकते हैं। इस तरह की कुछ परंपरागत तकनीकों का विवरण यहां दिया जा रहा है।

कच्छ क्षेत्र में धौलवीरा की जलसंरक्षण व्यवस्था

गुजरात के कच्छ क्षेत्र में धौलवीरा में लगभग 5000 वर्ष पूर्व की हड़प्पा सभ्यता के अवशेष मिले हैं। धौलवीरा की चौंकाने वाली खोज है यहां बने जल संरक्षण के विशाल जलकुंडों के अवशेष। ये जलकुंड इतने विशाल हैं कि अच्छी–खासी झीलें लगती हैं। इन सभी जलकुंडों में कुल मिलाकर 2,50,000 घनमीटर पानी रखा जा सकता था।

कम वर्षा वाले और कई बार अकाल से पीड़ित हुए इस क्षेत्र के संदर्भ में लगभग पांच हजार वर्ष पूर्व की इस जल संरक्षण तकनीक से आज भी बहुत कुछ सीखा जा सकता है। विशेषज्ञों ने उस समय की जलसंरक्षण विधि का अंदाजा लगाया है। धौलवीरा में वर्षा का जल ढलानदार छतों से होकर नीचे बनी गूलों में गिरता होगा। वर्षा के जल को संरक्षित करने के लिए यहां के लोग चैकडैम भी बनाते थे। यहां वर्षापोषित दो झीलें भी बनी मिली हैं। इन सब प्रकारों से संरक्षित वर्षा का जल नालियों से होकर बहता था। पानी का बहाव सुनिश्चित करने के लिए नालियों में सूराख या छेद बने थे ताकि इनसे होकर हवा जा सके। नालियों से बहकर यह विशाल जलकुंडों में गिरता था। इन विशाल जलाशयों की दीवारें व फर्श सूरज में पकी ईंटों के बने हैं। ये ईंटें परस्पर खड़िया मिट्टी से जुड़ी हैं। मिट्टी के अंदर मिला चूना ऊपरी सतह पर ही उपस्थित रहता था। ऐसा जान पड़ता है कि इन जलकुंडों की दीवारों पर मानो चूने का लेप किया गया हो। जलकुंडों में संरक्षित पानी कुंओं से आता था।

26 जनवरी, 2001 को गुजरात में भयंकर भूकंप आने के बावजूद यहां हड़प्पाकालीन सभ्यता के अवशेष, विशेषकर धौलवीरा के अवशेष ज्यों के त्यों बरकरार रहे। उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुंचा। आज उस समय की निर्माण तकनीक और कौशल से सीखने की जरूरत महसूस ही जा रही है।

विरडा प्रणाली

गुजरात के कच्छ जिले के उत्तरी मरुस्थलीय क्षेत्रों में अपर्याप्त वर्षा होती है। इस क्षेत्र में बन्नी नामक रेतीले क्षेत्र के चरागाह हैं। यहां के घुमंतू मालधारी लोगों ने वर्षा जल को संरक्षित करने की अद्भुत व्यवस्था पीढ़ी–दर–पीढ़ी विकसित की है विरडा प्रणाली। इस बारे में विज्ञान व पर्यावरण केंद्र, दिल्ली ने एक अध्ययन में बताया है कि प्राकृतिक रूप से पाई जाने वाली झीलों में एक छिछला कुंआ बनाया जाता है, जो विरडा कहलाता है। यह तकनीक इस ज्ञान पर आधारित है कि वर्षा का जल जब रिसकर जमीन के नीचे पहुंचता है तो वह खारे भूजल के ऊपर एकत्र होता है। मालधारी समुदाय के लोग साफ वर्षा जल की ऊपरी सतह तक पहुंचने वाले एक ढांचे को तैयार करते हैं। भूजल के करीब एक मीटर ऊपर जमा किए गए वर्षाजल की ऊपरी सतहों पर कई विरडाओं का निर्माण किया जाता है। जब वर्षाजल निकाला जाता है तो भूमिगत खारा पानी ऊपर उठने लगता है और विरडा की निचली सतह पर जमा हो जाता है। विरडा का ऊपरी हिस्सा गोलाकार होता है अतः बाल्टी व रस्सी की सहायता से आसानी से पानी खींचा जा सकता है। विरडा तकनीक की मदद से क्षेत्र के लोग सालभर की जरूरत के लायक वर्षा का पानी जमाकर संरक्षित रख सकते हैं। विरडाओं में जमा पानी 20 दिन से चार महीने तक (अलग–अलग परिस्थिति अनुसार) प्रयोग में लाया जा सकता है परंतु आजकल मानवीय कारकों से उत्पन्न पारिस्थितिकी असंतुलन के चलते इस क्षेत्र के विरडाओं का जल तेजी से खारा होता जा रहा है। इस प्रकार खारे पानी से भरी जमीन में बरसात का मीठा पानी जमा करने के लिए तालाबों–झीलों के अंदर कुंए बनाकर जल संरक्षित करने वाली इस आश्चर्यजनक विरडा प्रणाली को आज सुरक्षित रखने तथा इसके अनुकूल प्राकृतिक वातावरण सुनिश्चित करने की जरूरत है।

उड़ीसा का कालाहांडी क्षेत्र

उड़ीसा का कालाहांडी क्षेत्र आज चाहे अकाल और भूख के कारण चर्चित हो रहा है, पर एक समय यहां एक समृद्ध परंपरागत सिंचाई पद्धति थी। यहां के गांवों में कार्य कर रही एक मुख्य संस्था पश्चिम उड़ीसा कृषिजीवी संघ (संक्षेप में कृषिजीवी संघ) के समन्वयक जगदीश प्रधान एक महत्वपूर्ण कारण की ओर ध्यान दिलाते हुए कहते हैं, 'आज से पांच–छ दशक पहले के जो अध्ययन उपलब्ध हैं उनसे पता चलता है कि उस समय तक यहां एक समृद्ध परंपरागत सिंचाई व्यवस्था बची हुई थी। यह स्थानीय कौशल और संसाधनों पर आधारित सिंचाई व्यवस्था उस समय की कृषि भूमि के लगभग 48 प्रतिशत भाग को पानी देने में समर्थ थी। किंतु अनेक कारणों से यह परंपरागत सिंचाई व्यवस्था उपेक्षित व छिन्न–भिन्न होती गई और आज स्थिति यह है कि यहां की मात्र 11 प्रतिशत भूमि ही सिंचित है।'

जहां परंपरागत सिंचाई का ऐसा ह्रास एक बहुत दुखभरी खबर है, वहां इस समस्या की सही पहचान एक उम्मीद भी जगाती है। यदि यहां के लोग पहले 48 प्रतिशत तक सिंचाई की व्यवस्था कर सके थे, तो आज सरकार और स्वैच्छिक संगठनों का पूरा सहयोग उन्हें मिले तो वे इससे आगे भी बढ़ सकते हैं। उन्हें प्रोत्साहित करना होगा व विशेषकर उनके बुजुर्गों के पास संचित परंपरागत सिंचाई का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त करना होगा। 'मुंडा' यानी गांव के सिर के पास (ऊपरी हिस्से में) किया गया जल संग्रहण। 'काटा' यानी इससे नीचे किया गया जल संरक्षण कार्य जिसे वर्षा न होने की स्थिति में काटकर धान की सिंचाई की जाए। 'चहल' यानी फसल के बीच का वह तालाब जिसका पानी चारों और फैलाया जा सके। 'चुआ' यानी कम गहराई का अस्थायी कुंआ। इस तरह के तमाम स्थानीय तौर–तरीकों की जानकारी प्राप्त कर यहां की भौगोलिक स्थिति के बहुत अनुकूल रही परंपरागत सिंचाई

व्यवस्था को नया जीवन दिया जा सकता है।

राजस्थानः बूंद–बूंद का संरक्षण

कुंई या बेरी पश्चिमी राजस्थान में जल संरक्षण की एक व्यवस्था है। आमतौर पर कुंई तालाब के पास बनाई जाती है और उसमें तालाब का रिसा जल जमा हो जाता है। इससे पानी कम से कम बर्बाद होता है। लकड़ी के लट्ठों से ढकी कुंई आमतौर पर 10–12 मीटर गहरी होती है।

राजस्थान में वर्षाजल को संग्रहित करने की परंपरागत विधि है–कुंडी। कुंडी एक प्रकार का कुंआ है, जिसमें बरसात का पानी जमा किया जाता है। प्रायः यह एक विशाल तश्तरीनुमा या स्तूपनुमा आकार की संरचना होती है। कुंडी या कुंड में संग्रहित जल आमतौर पर पीने के काम लाया जाता है। मरुक्षेत्र में वैसे तो पानी से जुड़ी बीमारियां काफी कम हैं पर ऐसी मान्यता है कि कुंडियों में संरक्षित जल से ऐसे रोग नहीं होते।

राजस्थान के थार रेगिस्तानी इलाके में टांकों में जलसंचय करना एक परंपरा रही है। घरों की छतों से संचित बारिश का पानी इन टांकों में ही आता है। टांका एक बडे कमरेनुमा तरह की संरचना होती है। वर्षा कम होने पर कुंओं–तालाबों से पानी लाकर भी इन टांकों में संग्रहित किया जाता था। प्रायः टांकों से लगा एक कमरा होता था, जो ठंडा रहता था। दोपहर के समय परिवार के सदस्य यहां आराम किया करते थे। आज कई जगह नल के पानी को ही टांकों में भर लिया जाता है पर बाड़मेर में अभी छत से पानी जमा करके टांके में लाने की तकनीक जीवित है। इसके लिए घरों की छतें ढलवां होती हैं। एक पाईप के सहारे जल को आंगन या घर के पिछवाड़े बने टांके में ले जाया जाता है। टांके प्रायः जमीन के भीतर बने होते हैं।

पश्चिमी राजस्थान में खरीफ की फसल के दौरान खेतों को संरक्षित करके रखने की एक प्रणाली प्रचलित है– डाकेरियान। वर्षा के जल को संग्रहित करने के लिए यहां खेतों की मेढ़े ऊंची कर दी जाती हैं। यह पानी जमीन में समा जाता है। वर्षा के संरक्षित जल का कुछ हिस्सा रिसकर यहां जमा हो जाता है। इसे पुनः उपयोग में लाया जाता है।

लगभग 400 साल पहले बने आमेर के किले (राजस्थान) की जलसंग्रह व शुद्धिकरण की व्यवस्था आश्चर्यजनक है। यहां एक जल शुद्धिकरण कक्ष है। किले की छत पर बने हौद में महल की छत व मावठा सागर से पानी पहुंचाया जाता है किले की छत पर बने हौद से यह पानी सकोरों की पाइपलाइनों से होकर जल शुद्धिकरण कक्ष में आता है। इस कक्ष में एक कलात्मक छतरी के नीचे तकरीबन तीन फीट चौड़ा गहरा कुंआ है। जल इस कुंए में आकर इकट्ठा होता जाता है। कुंए में लगी पत्थर की जालियां गंदगी को रोक लेती हैं। इसके नीचे बिछी पत्थर व बजरी से छनकर जल भूमिगत टांके में जाता है। सकोरों की पाईपलाईन के मोटे नालों से इस कक्ष में आने वाले मार्ग के बीच में गोलाकार गड्ढे बने हैं। जब इन गड्ढों में पानी भरता था तो उसके साथ बहकर आने वाली मिट्टी इन गड्ढों में रूककर एकत्र होती रहती थी। मानसून से पहले किले की छतों और गुप्त महलों में बने जल के टांके को बाकायदा साफ किया जाता था ताकि गंदगी जल में न आए। पानी की वापिस निकासी के लिए भी मोखों की व्यवस्था है।

राजस्थान के किले तो वैसे भी विख्यात हैं पर इनका जलप्रबंध विशेष रूप से देखने योग्य है। इससे बहुत कुछ सीखा जा सकता है। चितौड़ के किले में हाथीकुंड के सीपेज से गोमुख का झरना बनता है और इस झरने से फिर चितौड़ के किले का मुख्य जलाशय बनता है।

आंध्र प्रदेश व तमिलनाडु के तालाब

वर्ष 1956 में आंध्र प्रदेश में सिंचाई के लिए उपयोगी 58,518 तालाब थे जिनसे लगभग दस लाख हेक्टेयर की सिंचाई हो रही थी अथवा यहां के कुल सिंचित क्षेत्र के 40 प्रतिशत की सिंचाई तालाबों से हो रही थी। इससे पता चलता है कि यहां तालाबों की सिंचाई कितनी महत्वपूर्ण रही है। इसमें कुछ कमी अवश्य आई है पर इसका महत्व बना हुआ है। इनमें से अनेक तालाब ऐसे बनाए गए हैं कि वे एक–दूसरे से जुड़े हुए हैं व उनमें पानी का पूरा–पूरा उपयोग होता है, वह व्यर्थ नहीं बहता है। तमिलनाडु के कुल सिंचित क्षेत्र में से लगभग एक तिहाई की सिंचाई आज तक यहां एरी नाम के प्राचीन तालाबों से हो रही है।

नगालैंड की जाबो प्रणाली

नगालैंड के किक्रुमा गांव में जाबो नामक एक सिंचाई प्रणाली प्रचलित है। इसे 'रुजा' भी कहते हैं। चर्चित पुस्तक *बूंदों की संस्कृति* के अनुसार इसमें मुख्यतः बरसात का पानी तालाबों में जमा किए जाने का प्रचलन है। इसके तहत कई तालाब खोदे जाते हैं। तालाबों के ऊपर का क्षेत्र जलसंग्रह में मददगार होता है। इस क्षेत्र की ढलान तीखी होती है। तालाबों के नीचे बांस या टहनियों की बाड़ बनाई जाती है, जिसके भीतर पशु रखे जाते हैं। जब बारिश के पानी से यह स्थान धुलता है तो पानी के साथ खाद भी बहकर बाड़ से होता हुआ नीचे स्थित सीढ़ीदार खेतों में आता है और अपने साथ गोबर के रूप में प्राकृतिक खाद लेता आता है।

किक्रुमा गांव के लोग सड़कों के किनारे गति अवरोधकों में भी पानी रोककर उसका सिंचाई हेतु प्रयोग करना जानते हैं। सड़कों से एकत्र जल नालियों के सहारे तालाबों तक पहुंचाया जाता है। इस गांव के लोग प्राकृतिक तालाबों के किनारों पर सब्जियां उगाते हैं। ये जलस्रोतों के आसपास केले के पेड़ समेत कई वृक्ष लगाते हैं। केले के पेड़ के बारे में यह मान्यता है कि इसमें पानी को थामने की क्षमता होती है। जाबो पद्धति के तहत वृक्षारोपण, पशुपालन, जल संरक्षण व सिंचाई हेतु उसका प्रयोग, खेती, भूक्षरण रोकने का प्रयास आदि सब कुछ एक साथ होता है। ❑

सी–27, रक्षा कुंज,
पश्चिम विहार, नई दिल्ली–110041

जल प्रबंधन और समाज का उत्तरदायित्व

विमला साहू
डा. अमरजीत कौर गिर

जिस प्रकार मिट्टी एक संसाधन है, उसमें आत्मा नहीं है किंतु उपयोग की चीज है और मानव जीवन के निर्वाह में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है उसी प्रकार जल भी एक संसाधन है, उसमें आत्मा नहीं है और यह उपयोग की वस्तु है। जल ही जीवन है और यह प्रकृति का एक अहम भाग है। मनुष्य को जल के साथ तालमेल बैठाकर चलना होगा, जल का दोहन करें लेकिन सम्मान के साथ। इसके लिए हमें दो बिंदुओं पर विशेष ध्यान देना होगाः 1. जमीन के ऊपर का पानी और 2. जमीन के नीचे का पानी। इस हेतु हमें निम्नलिखित बातों पर ध्यान केंद्रित करना होगा।

जल प्रबंधन

जल का प्रबंधन जल के बहाव के स्तर पर निर्धारित किया जाना चाहिए। यदि नदियां या जलधारा एक से अधिक राष्ट्रों, राज्यों या जिलों से होकर गुजरती हैं तो उसका प्रबंधन भी उसी स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय, राज्य या जिला के दृष्टिकोण से किया जाना उचित है किंतु स्थानीय जल समुदाय को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। **यदि स्थानीय समुदाय जल प्रबंधन कर रहा है तो सरकार उसमें दखल न करे। समुदाय खुद जल का प्रबंधन करें। जैसे कि 'लावा का बांस' की स्थिति में हम पाते हैं कि स्थानीय लोगों ने तरुण भारत संघ की मदद से अरावली नदी पर बांध बनाकर उसको पुनर्जीवित किया।**

जल उपयोग नीति

आजकल जगह–जगह जलागम कार्यक्रम जोरों पर चल रहे हैं, अतः जगह–जगह जल संरक्षण एवं संग्रहण संस्थाएं निर्मित हो रही हैं। इन योजनाओं को सफल बनाने के लिए संरचनाओं की क्षमताओं के अनुसार ही उपयोग हेतु प्राथमिकताएं निर्धारित की जानी चाहिएं। जैसेकि सरदार सरोवर बांध में लागू की गई हैं:

1. पीने का पानी – सार्वजनिक
2. पीने के पानी की सुरक्षा – कुम्हार
3. खाद्यान्न सुरक्षा जैसे कृषक यदि ज्वार, बाजरा, मक्का, गेहूं इत्यादि जीविका निर्वाह हेतु उपज प्राप्त करता है तो फिर आता है मिर्च, गन्ना इत्यादि।

जल निर्धारण

एक नदी घाटी के प्रारूप के आधार पर जल का प्रबंधन किया जाना चाहिए और यह बहुआयामी होना चाहिए। इसका प्रबंधन नदी घाटी क्षेत्र या जलागम क्षेत्र की जनता द्वारा किया जाना उचित है, जैसे बड़े एवं छोटे कृषक के प्रतिनिधि, पशुपालक, शहरवासियों एवं उद्योगपतियों के प्रतिनिधि मिलकर पानी के प्रबंधन की व्यवस्था करें। **पानी का जितना रिसाव या रिचार्ज हो रहा है उससे अधिक पानी का दोहन न किया जाए। इसमें सरकार अहम भूमिका अदा करे कि न्यूनतम जलस्तर क्या हो। उससे नीचे जलस्तर न जाए और इसके लिए कड़े से कड़े नियम की व्यवस्था की जाए।** साथ ही गांव के लोग ही मिलबैठकर तय करें कि कुआं या नलकूप कितना गहरा होगा। किंतु यदि लोग इस गहरीकरण स्तर पर ध्यान नहीं दे रहे हैं तो लोग उसमें दखल करें जैसाकि गुजरात में 300 मीटर के नीचे ही जलस्तर मिलता है। उसी प्रकार वहां के हजारों लोगों ने सिंचाई के लिए 100 मीटर से नीचे ट्यूबवैल नहीं लगाने के लिए ग्रामवासियों का नियम बनवाया है। देवास, मध्य प्रदेश इत्यादि लावानिर्मित स्थान हैं जहां की मिट्टी ठोस है, और जितना पानी एक दिन में एक नलकूप से निकल जाता है उतने पानी को रिचार्ज होने में हजारों वर्ष लग जाते हैं। फलतः लोग अब जलागम कार्यक्रमों पर विशेष ध्यान दे रहे हैं क्योंकि बाबा आमटे द्वारा निर्मित संस्था समाज प्रगति सहयोग एवं 'वाटर' वाटरशेड आर्गेनाइजेशन ट्रस्ट, अहमदनगर इत्यादि संस्थाएं जलागम कार्यक्रमों पर महत्वपूर्ण भूमिका निभाकर ग्रामवासियों को जागरूक बना रही हैं। इन संस्थाओं के काम अति सराहनीय हैं। अतः किसी भी जलागम क्षेत्र या स्थान को विकास हेतु विश्लेषित करने के लिए निम्नलिखित बिंदुओं का विश्लेषण करना चाहिएः

- खेती का स्वरूप, फसलचक्र और प्राप्त प्राकृतिक संसाधनों से उत्तम खेती कैसे की जाए;
- अकाल के कारण;
- अकाल से मुक्ति के उपाय;
- जल आंदोलन को जन–जन का आंदोलन कैसे बनाया जाए;
- बाढ़ और सूखे के उपाय।

आज कम समय में अधिक खेती, उपज, धनप्राप्ति हेतु दिन प्रतिदिन नए–नए उद्योगों की स्थापना की जा रही है जिससे कि प्रकृतिप्रदत्त चीजों का अंधाधुंध दोहन हो रहा है। यही वजह है कि आज पर्यावरण का संतुलन डगमगा–सा गया है। कभी बारिश, तो कभी ठंड, तो कभी गर्मी।

जलागम विकास हेतु ध्यान देने योग्य बातें –

- जमीन के भीतर पानी का संग्रह।
- जमीन के ऊपर पानी का संग्रह।

- रोके गए पानी का समुचित रूप से संचालन।
- नए बांध के काम में पानी के संग्रहण को लिया जाना चाहिए।
- भूगर्भ जल के उपयोग का नियम बनना चाहिए।
- जल संरक्षण की प्रवृत्ति के लिए जागृति लानी चाहिए।
- पानी के काम में संस्था मार्गदर्शक के रूप में काम करें जिसमें लोगों की हिस्सेदारी सुनिश्चित होनी चाहिए।
- पर्यावरण संतुलन के लिए लोगों में चेतना जागृत करनी चाहिए।

सामुदायिक उत्तरदायित्व

- यदि गांव में संगठन नहीं है तो गांव को संगठित करना होगा;
- मास्टर प्लान बनाया जाए;
- वृक्षारोपण किया जाए;
- हर गांव में अनाज, चारा इत्यादि का पैसा बैंक बनाया जाए;
- जमीन का अतिक्रमण हटाया जाए तथा
- पानी के काम में जंगल विभाग को भी जोड़ा जाए।

जलागम निरंतरता हेतु ध्यान देने वाली बातें

1. पुराने जन संसाधनों का जीर्णोद्धार कर उन्हें पुनर्जीवित किया जाए।
2. आपदा प्रबंधन का उपाय किया जाए।
3. जलग्रहण प्रबंधन तकनीकी और परंपरागत कार्य में समन्वय स्थापित किया जाए।
4. जल प्रबंधन योजना–दीर्घकालीन और अल्प–कालीन योजना का निश्चित प्रारूप बनाया जाए।
5. वृक्षारोपण को बढ़ावा दिया जाए।
6. बांधों पर अतिक्रमण को शक्ति से निपटाया जाए।
7. प्रबंधन के साथ–साथ संरक्षण के कार्य को प्रोत्साहित किया जाए।

आज हमने कम समय में अधिक उपज प्राप्ति की लालसा को बढ़ावा दिया है, फलतः हाईब्रीड के कारण उपज तो अधिक हो रही है किंतु चारे के लिए हमें चारा बिक्री केंद्रों का आसरा लेना पड़ रहा है। आज देश की स्थिति यह है कि 6 या 7 बड़ी कंपनियों के हाथों में हमारे खाद्यानों जैसे गेहूं, चावल, दाल का 60–70 प्रतिशत व्यवसाय केंद्रित होकर रह गया है। आज कृषक अपनी आवश्यकता की वस्तुओं को छोड़कर गन्ना, मिर्च, कपास, मूंगफली इत्यादि चीजों का उत्पादन कर व्यावसायियों के हाथों की कठपुतलियां बनते जा रहे हैं। इसलिए खेती को विकसित करने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं :

- यदि पानी की समस्या है तो कम पानी में होने वाली फसलों का उत्पादन किया जाए।
- कम पानी से अधिक फसल लेने हेतु सघन खेती को प्राथमिकता दी जाए।
- पारंपरिक खेती को बढ़ावा दिया जाए।
- देसी बीज और देसी खाद के उपयोग को बढ़ावा दिया जाए।
- बदलते हुए फसल चक्र को अपनाया जाए, जिससे कि जमीन की उर्वरता बनी रहे।
- ग्रामवासियों को कृषि आधारित आवश्यकताओं की पूर्ति पर स्वावलंबित किया जाए।

जल आंदोलन को जन–जन का आंदोलन कैसे बनाया जाए

- वर्तमान स्थिति में पूरे देश में एन.जी.ओ. का जाल–सा बिछ गया है। जल प्रबंधन कार्य का 25 प्रतिशत भाग एन.जी.ओ. को दिया जाना चाहिए।
- जल की समस्याओं से जो भावनात्मक जुड़ाव कम है, उसे बढ़ाने के प्रयास किए जाने चाहिए।
- नामी संस्थाओं को निरीक्षण कमेटियों में रखना चाहिए।
- योजना से प्रभावित महिलाओं और व्यक्तियों को प्रभावशाली एवं सृजनात्मक शक्तियों से जोड़ा जाए।
- स्कूली शिक्षा विषयों में जल के ऊपर भी शिक्षा दी जाए।
- लोकभाषा, लोकसंस्कृति, लोकनृत्य इत्यादि में पानी के महत्व पर प्रकाश डाला जाए।
- संस्थाओं द्वारा पुराना वाटरशेड क्षेत्र या अच्छे वाटरशेड क्षेत्रों का भ्रमण मीडिया के रचनात्मक काम करने वाले लोगों के सामने रखें।
- समाज के भूमिहीन लोगों को विकास के क्षेत्र में प्राथमिकता दें।
- पानी के काम से लाभान्वित लोगों द्वारा अनाज बैंकों की स्थापना की जानी चाहिए एवं भूमिहीन को आवश्यकता पड़ने पर स्वावलंबन दलों के माध्यम से ऋण दिया जाना चाहिए।

प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण गरीब जनता के लिए ज्यादा जरूरी है। यदि जलस्तर नीचे चला जाता है तो धनी कृषक के पास तो साधन हैं किंतु गरीब किसान के पास भूखों मरने के अलावा और कोई चारा नहीं है। पानी को खरीदने की उनकी शक्ति नहीं रह जाती। यही कारण है कि आए दिन समाचारों में कृषकों की आत्महत्या की खबरें छपती हैं।

उसी प्रकार भारत में सबसे ज्यादा वर्षा वाला गांव चेरापूंजी है जहां 40 इंच वर्षा होती है पर चार–पांच माह के बाद ही पानी की समस्या उठ खड़ी होती है क्यों? कारण, लोगों में पानी के सदुपयोग की समझ नहीं है। ❑

रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय,
जबलपुर

बुंदेलखंड की बंजरभूमि में हरियाली संभव

डा. मुकेश चंद्र
एन.वी. सिंह

बढ़ती जनसंख्या के साथ-साथ बढ़ते औद्योगीकरण एवं शहरी क्षेत्र से खेतीयोग्य भूमि सिकुड़ती जा रही है अतः आज बंजरभूमियों के उपयोग एवं विकास के बारे में सोचने की आवश्यकता है जिससे भूमि उपयोगिता एवं पारिस्थितिकीय दशा के अनुरूप तकनीकी विकास किया जाए ताकि ग्रामीण भाइयों की आर्थिक दशा सुधरने के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण भी हो सके।

भूमि, पानी, जलवायु एवं वनस्पतियां प्रकृति की अनमोल संपदा हैं जिनपर प्रत्येक जीवधारी जीविकोपार्जन हेतु निर्भर है। अतः आने वाली पीढ़ियों के लिए इन संपदाओं का संरक्षण हमारा परम कर्तव्य है। आज भारत की जनसंख्या 102 करोड़ से ऊपर पहुंच गई है जोकि विश्व जनसंख्या का लगभग 16 प्रतिशत है जबकि हमारे पास भौगोलिक क्षेत्रफल मात्र 2.5 प्रतिशत ही है। दिनोंदिन बढ़ रही जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हमारे प्राकृतिक संसाधनों का दोहन काफी तेजी से बढ़ रहा है। यही कारण है कि तमाम कोशिशों के बावजूद जंगलों के अंतर्गत क्षेत्रफल घट रहा है जिससे मृदाक्षरण को बढ़ावा मिला है और जलाशयों में सिल्ट जमा हो जाने से इसने बाढ़ की विभीषिका को जन्म दिया है।

नहरी क्षेत्रों में जलसंसाधनों का दुरुपयोग होने से जलमग्नता व क्षारीयता बढ़ गई है। बढ़ती जनसंख्या के साथ–साथ बढ़ते औद्योगीकरण एवं शहरी क्षेत्र से खेती योग्य भूमि सिकुड़ती जा रही है अतः आज बंजर भूमियों के उपयोग एवं विकास के बारे में सोचने की आवश्यकता है जिससे भूमि उपयोगिता एवं पारिस्थितिकीय दशा के अनुरूप तकनीकी विकास किया जाए ताकि ग्रामीण भाइयों की आर्थिक दशा सुधरने के साथ–साथ प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण भी हो सके। उत्तर प्रदेश के विभाजन के पश्चात प्रदेश के भौगोलिक क्षेत्र 2,40,927 वर्ग किमी. के सापेक्ष वनावरण मात्र 10,756 वर्ग किमी. यानी 4.47 प्रतिशत ही रह गया है। राष्ट्रीय एवं प्रदेश वननीति के अनुसार यह आवरण 33 प्रतिशत होना चाहिए। दसवीं पंचवर्षीय योजना में इसे 25 प्रतिशत तक बढ़ाने का लक्ष्य रखा गया है। प्रदेश में 33 प्रतिशत तक वनावरण लाने के लिए 68,700 वर्ग किमी. क्षेत्र में अतिरिक्त रूप से वृक्षारोपण करना होगा। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक किसान को पेड़ लगाने हेतु बढ़चढ़कर आगे आना आवश्यक होगा।

बंजरभूमि में उद्यान – चारागाह पद्धति

बुंदेलखंड क्षेत्र, उत्तर प्रदेश राज्य के दक्षिण–पश्चिम किनारे पर 25°, 27′ उत्तर 78°, 35′ पूर्व में स्थित है जो 29.61 लाख हेक्टेयर में फैला हुआ है, इसमें झांसी व चित्रकूट धाममंडलों के सात जिले झांसी, जालौन, ललितपुर, महोवा, हमीरपुर, बांदा एवं चित्रकूट आते हैं। क्षेत्र की जलवायु अर्द्धशुष्क है और यहां औसत वार्षिक वर्षा 925 मिलीमीटर होती है, जिसका 80 से 90 प्रतिशत भाग मानसून के चार महीनों में (जून से सितंबर तक) प्राप्त होता है और वर्ष के शेष आठ माह सूखे ही रहते हैं, लगभग 76 प्रतिशत क्षेत्र पर वर्षाआश्रित खेती की जाती है। सिंचाई के

साधन बहुत ही सीमित हैं, समस्त नहरें वर्षाआश्रित हैं, प्रत्येक तीन–चार वर्षों के अंतराल पर फसलों को लगातार एक–दो बार सूखे का सामना करना पड़ता है और दाना भरने की अवस्था में फसलें प्रायः नमी के अभाव एवं तापक्रम की अधिकता से सूख जाती हैं। इस दृष्टि से यह क्षेत्र पिछड़ा है।

बुंदेलखंड में खेतिहर भूमि के अतिरिक्त लगभग 60 प्रतिशत अनुपयोगी बंजरभूमियां हैं जिसमें कटी–फटी, ऊंची–नीची, ढालू एवं पथरीली पहाड़ियां हैं जहां फसलें उगाना लाभदायक नहीं है। साथ ही इन क्षेत्रों में वनों की बेरोकटोक कटाई, अधिकतर पशुओं द्वारा वर्षभर स्वतंत्र एवं अनियंत्रित रूप से चराई होती है। यहां वर्षा की मात्रा एवं सघनता अधिक होने से वर्षा की बूंदें सीधे बंजर भूमि पर पड़ती हैं, जिससे प्रत्येक वर्ष सैकड़ों हेक्टेयर भूमि कटकर वर्षा जल के साथ बह जाती है, जिसके कारण इन भूमियों की उर्वराशक्ति में भारी कमी आई है। बुंदेलखंड क्षेत्र की जलवायु प्रदेश के अन्य भागों से बिल्कुल भिन्न है। यहां 44 प्रतिशत क्षेत्र में काली मृदा (मार एवं कावर) जो नमी पाने पर चिपकती है और सूखने पर फट जाती है तथा 56 प्रतिशत क्षेत्र में लाल मृदा (राकर एवं पडुवा) जो बहुत हल्की, उथली एवं बजरीयुक्त है, इनकी जलधारण क्षमता बहुत कम होती है। साथ ही यहां छोटी–छोटी पथरीली पहाड़ियां हैं जो दिन में सौरऊर्जा ग्रहण कर लेती हैं जिसके कारण दिन में अधिक तापक्रम रहता है परंतु रात्रि सुहावनी होती है। यहां खरीफ ऋतु में धान, मूंगफली, उर्द, मूंग, तिल, अरहर, ज्वार, सब्जियां आदि तथा रबी में गेहूं, जौ, चना, मटर, मसूर, अलसी व सरसो आदि फसलें प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं। खरीफ में लगभग 30 प्रतिशत क्षेत्रफल पर ही फसलें उगाना संभव हो पाता है। यहां रबी मौसम की एक ही फसल लगभग 18.11 लाख हेक्टेयर में सफलतापूर्वक ली जाती है।

बुंदलेखंड में किसान सदियों से खेती के साथ–साथ पशु भी पालते आ रहे हैं जो उनकी विषम परिस्थितियों में आर्थिक जरूरतों को पूरा करने में सहायक होते हैं। सूखे की स्थिति में फसलों का नष्ट होना एक सामान्य प्रक्रिया है। ऐसी स्थिति में कभी–कभी तो किसानों को बोए गए बीज की लागत भी

बंजरभूमि में अपनाई गई वनचारागाह पद्धति के अंतर्गत चरती भेड़ें

प्राप्त नहीं हो पाती है, साथ ही चारे की कमी के कारण बहुत से पशु मर जाते हैं और शेष की उत्पादन क्षमता क्षीण हो जाती है। ऐसी दशा में पेड़–पौधे ही किसानों की रोजमर्रा की जरूरतों को पूरा करने तथा बंजरभूमियों की भूमिक्षरण से रक्षा करने में सहायक हो सकते हैं।

बंजर भूमि में भूमि उपयोग की वैकल्पिक कृषिवानिकी पद्धतियां अपनाकर प्रत्यक्ष रूप से निम्नलिखित लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं–

- बेकार पड़ी बंजर, अनुपजाऊ भूमियों को बहूद्देशीय वृक्ष, फसलें एवं घास लगाकर सुधारा जा सकता है।
- सूखे से उत्पन्न फसलों के जोखिम को कम किया जा सकता है।
- वृक्षों के साथ कृषि फसलों, घास एवं चारा को एकसाथ लगाने से भूमि में जैव पदार्थ की मात्रा बढ़ती है जिससे भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि की जा सकती है।
- कृषिवानिकी पद्धति के अपनाने से क्षेत्र की सूक्ष्म जलवायु में सुधार होता है जो पर्यावरण एवं पारिस्थितिकीय संतुलन में सहायक हो सकता है।
- कृषिवानिकी से ईंधन हेतु जलौनी लकड़ी प्राप्त होती है और चारा उत्पादन में भी वृद्धि होती है।
- कृषिवानिकी अपनाने से मृदाक्षरण की रोकथाम और भूमि की भौतिक एवं रासायनिक दशाओं में सुधार होता है।
- कृषिवानिकी पद्धति के अंतर्गत फसलें एवं पेड़ों के लगाने से किसान भाई वर्षभर अपने श्रम का उपयोग कर सकते हैं।

कृषिवानिकी पद्धति में फसलों के साथ लगाए

तालिका–1

भूमि प्रकार	संभावित भू–क्षमता श्रेणी	संभावित भू–उपयोग पद्धति
1. पहाड़ी क्षेत्र	6 से 8 तक	उद्यान चारागाह, वन चारागाह
2. बीहड़ क्षेत्र	6 से 8 तक	उद्यान वन+चारागह
3. कंकरीली एवं पथरीली (राकर भूमि)	4–6 तक	वन चारागाह, उद्यान चारागाह कृषि वन+उद्यानिकी
4. ऊसर में	3 व 4 में	वन चारागाह, उद्यान चारागाह कृषि वन+उद्यानिकी

तालिका–2

बुंदेलखंड की बंजरभूमियों पर कृषिवानिकी पद्धतियों हेतु उपयुक्त फलदार बहूद्देशीय वृक्ष

फलदार पेड़	प्रजातियां
पहाड़ी भूमियों पर	
पपीता	कुर्ग हनीडयू, पूसा डेलीसियस, पूसा मैजिस्टी, पूसा नन्हा व ज्वाइंट
आंवला	चकैया, कृष्णा, कंचन, बलवंत, एन.ए. 6 व 7,
बेर	उमरान, गोला, बनारसी कडका, पैउदी, कैथली, मुंडिया
बीहड़ों में	
जामुन	फरैदा, भदही जामुन
इमली	औरंगावादी, एवं पेरियाकुलम सलेक्शन
कटहल	रुद्राक्षी, सिंगापुर, बारहमासी।
अमरूद	इलाहाबादी सफेदा, सरदार, लखनऊ–49, सफेद जैम
कंकरीली एवं पथरीली भूमियों पर	
आम	लंगड़ा, चौंसा, दशहरी, मलिहावादी, मल्लिका, नीलम
बेल	एन.वी. 5,6, व 9, पंतनगर सिलेक्शन
अनार	गणेश, ढोलका, जी–137
केला	हरीछाल, बसराई, मर्तवान, डवार्फ हजारा

कृषिवानिकी हेतु बहूद्देशीय पेड़ों का चयन

वृक्ष	उपयोगिता
बबूल	लकड़ी, चारा, रंग, गोंद, कोयला, नत्रजन स्थिरीकरण
खेर	चारा, कत्था, लकड़ी, नत्रजन स्थिरीकरण
सुबबूल	चारा, जलौनी, लकड़ी, नत्रजन स्थिरीकरण
शीशम	फर्नीचर एवं इमारती लकड़ी, चारा, नत्रजन स्थिरीकरण
बांस	मृदा सरंक्षण, गृह निर्माण, घरेलू कार्य
सिरस (काला व सफेद)	कृषि औजार, बल्लियां, चारा
नीम	औषधि, तेल, लकड़ी, चारा
यूकेलिप्टस	बल्लियां, पेपर लुग्दी
पापुलर	चारा, माचिस, प्लाईवुड, लुग्दी
सागौन	फर्नीचर एवं इमारती लकड़ी
ढाक	चारा, जलौनी लकड़ी, रंग

कृषिवानिकी पद्धति में उपयुक्त घास

घास	उपयोगिता
नेपियर घास	चारा व मृदा संरक्षण
लेमन घास	चारा व मृदा संरक्षण
अंजन घास	चारा व मृदा संरक्षण
खस घास	चारा, कूलर एवं सुगंध, मृदा संरक्षण
स्टाइलो घास	चारा व मृदा संरक्षण

कृषिवानिकी पद्धति में उपयुक्त फसलें

चारा एवं कृषि फसलें	उन्नतिशील प्रजातियां
मक्का	गंगा सफेद–2, जौनपुरी गंगा–5, (संकुल) – नवीन, विजय, एवं तरुण
हल्दी	पडरौना, वस्ती, बरुआसागर,
लहसुन	जामनगर, स्थानीय
अदरक	बरुआसागरी, नादिया, मानथोडिया
प्याज	पूसा रैड व व्हाइट राउंड, पूसा रत्नार, पंजाब सिलेक्शन, नासिक रैड, पटना रैड
लोबिया	पूसा फागुनी, पूसा दो फसली,
लॉकी	पूसा मेगदूत, पूसा मंजरी, पूसा समर, प्रोलिफिक लांग,
तोरई	पूसा चिकनी, पूसा नसदार, कल्यानपुर, चिकनी
टिंडा	अरका टिंडा
खीरा	कल्याणपुर लंबा हरा, बालन खीरा
करेला	कल्याणपुर बारहमासी, पूसा दो मौसमी, अर्का हरित
मिर्च	पूसा बारहमासी, अरका गौरव, पंत ज्वाला
कद्दू	पूसा अलंकार, अलीगंज गोल
धनिया	फैजावादी, को 0–1, 2 व 3
सौंफ	आर.एस.–1, गुजरात क्यूमिन–1 व 2
मैथी	पूसा अर्ली बचिंग, कसूरी
पालक	अर्ली स्मूथ लीफ
भिंडी	पूसा सावनी, पूसा मखमली, परभनी, क्रान्ति
टमाटर	पूसा रूबी, पूसा अर्ली डवार्फ, पूसा–120
बैंगन	पूसा पर्पल लौंग व राउंड, पूसा क्रांति व अनमोल, अरका नवनीत
अन्य सब्जियां	फूलगोभी, पात गोभी, गांठ गोभी, गाजर, मूली इत्यादि

जाने वाले पेड़ों में निम्नलिखित गुण होने चाहिए:–

1. तेजी से बढ़ने वाले पौधे हों जैसे पापुलस स्पीसीज (पापुलर), यूकेलिप्टस, सुबबूल आदि।
2. पौधे कटाई–छंटाई सहने करने वाले हों जैसे यूकेलिप्टस, पापुलर, सुबबूल, सहजन आदि।
3. पेड़ की ऊपरी शाखाओं का फैलाव कम हो, जिससे फसलों के ऊपर छाया का असर न पड़े जैसे यूकेलिप्टस, पापुलर आदि।
4. पत्तियों का विन्यास ऐसा हो जो पर्याप्त मात्रा में सूर्य की रोशनी के भूमिसतह पर पहुंचने में बाधा न पहुंचा सकें जैसे बबूल, यूकेलिप्टस, इमली, बेर, आंवला आदि।
5. पेड़ों में पतझड़ ऐसे समय में हो कि फसल के ऊपर हानिकारक प्रभाव न पड़े।
6. पत्तियां जमीन के ऊपर गिरने के बाद मिट्टी में सड़कर आसानी से मिल सकें जैसे बबूल, इमली, आम, जामुन आदि।
7. पेड़ों की जड़ें इतनी गहरी जाएं कि फसलों एवं पेड़ों को पोषकतत्व प्राप्त करने में प्रतिस्पर्धा न हो जैसे डलबर्जिया शिशू (शीशम), अकेसिया निलोटिका (बबूल) व यूकेलिप्टस।
8. पेड़ वायुमंडलीय नत्रजन स्थिर करने वाले हों जिससे भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि हो सके।
9. पेड़ों का चयन उस क्षेत्र की आर्थिक, सामाजिक एवं पर्यावरणीय आवश्यकताओं के अनुसार करें।
10. पेड़ों की पत्तियों में पशुओं द्वारा पसंद किए जाने वाले पौष्टिक तत्व पर्याप्त मात्रा में हों जैसे सुबबूल।
11. पेड़ों की प्रकृति जमीन की गहराई से पोषकतत्वों को खींचकर प्रयोग करने की हो ताकि सह–फसलों को पोषक तत्वों व जल प्रतिस्पर्धा से कोई हानि न हो।
12. पेड़ बहूद्देशीय हों ताकि एक ही प्रजाति से कई लाभ प्राप्त किए जा सकें।

भूमिक्षमता के आधार पर भूमियों को दो प्रमुख भागों में बांटा जा सकता है। कृषि योग्य एवं कृषि अयोग्य अथवा बंजर। बंजर भूमियां पेड़ लगाने के लिए उपयुक्त होती हैं। भूमिक्षमता के आधार पर विभिन्न कृषिवानिकी

बंजरभूमि में कृषिवानिकी

पद्धतियों की उपयुक्तता को तालिका–1 के अनुसार वर्गीकृत किया जा सकता है

कृषि वन उद्यानिकी

इस पद्धति में फसलों के साथ–साथ बहूद्देशीय पेड़ व फल वृक्ष एक साथ लगाए जाते हैं और इसमें कृषक परिवार की अधिक से अधिक आवश्यकताओं जैसे खाद्यान्न, चारा, ईंधन, भूमि उर्वरता में वृद्धि, इमारती लकड़ी, फल आदि की पूर्ति एक ही भूमि के टुकडे से हो सकती है। इसका एक उदाहरण गेहूं+सुबबूल+बेर/अमरूद/किन्नों/आंवला है। यह पद्धति श्रेणी 4 की भूमियों हेतु सर्वथा उपयुक्त है। इसे कुछ परिवर्तनों के साथ श्रेणी 6 की भूमियों में भी ले सकते हैं।

वन चारागाह पद्धति

यह कृषिवानिकी पद्धति श्रेणी 6 की भूमियों हेतु सर्वोत्तम है। इस पद्धति में चारा घास व झाड़ियों के साथ बहूद्देशीय वृक्षों का समावेश किया जाता है। भूमि यदि ढालू है तो मृदा संरक्षण हेतु यांत्रिक विधियों का प्रयोग करते हुए वृक्षारोपण करते हैं। अलाभकारी खरपतवार व अनावश्यक झाड़ियों को निकालकर लाभदायी घास व झाड़ियों को रोपित करते हैं। इस पद्धति हेतु उपयुक्त वृक्ष प्रायः कठिन परिस्थितियों में पनपने वाले होते हैं।

वन–उद्यान–चारागाह पद्धति

यह पद्धति श्रेणी 6 से 7 की भूमियों हेतु सर्वथा उपयुक्त है। इस पद्धति में दलहनी चारे वाली फसलों एवं घासों के साथ बहूद्देशीय वृक्ष एवं फलवृक्ष जैसे बेर, आंवला, शरीफा, करौंदा, लसोडा आदि का समावेश किया जाता है। **बुंदेलखंड क्षेत्र में इस प्रकार की भूमियों पर प्राकृतिक रूप से उग रही बेर की झाड़ियों को कलिकायन द्वारा सुधरी किस्म की बेर प्रजातियों में परिवर्तित कर विकसित करने की अपार संभावनाएं हैं, इससे बेर के पौधों से शीघ्र फल मिलने लगता है और क्षरणयुक्त भूमि में वृक्ष स्थापन की समस्या से मुक्ति मिल जाती है।**

पेड़+घास/फसलें मृदाक्षरण तथा जल–बहाव रोकने में सक्षम होते हैं। उक्त भू–उपयोग पद्धति, फसलें/घास (शाकीय) या पेड़ (काष्ठीय) की तुलना में ज्यादा कारगर हैं। पेड़ अपने पत्तों द्वारा वर्षा की बूंदों को ऊपर ही रोककर उनका वेग कम कर देते हैं और पेड़ों के तने बहते पानी के विरुद्ध अवरोध उत्पन्न करके उनके वेग को कम करके मृदाक्षरण रोकते हैं। **जलबहाव की गति कम होने से पानी अधिक देर तक मिट्टी में रुका रहता है और भूमि में प्रविष्ट होने का उसे पर्याप्त समय मिल जाता है। इस प्रकार मृदा व जल दोनों ही संरक्षित हो जाते हैं।** घास एवं फसलें भी वर्षा की बूंदों का वेग अपने बिछावन द्वारा कम करने में सहायक होती हैं और इनकी जड़ें मिट्टी को बांधें रखने में अधिक कारगर होती हैं परिणामस्वरूप मिट्टी कटने नहीं पाती है। साथ ही इनके सड़ने–गलने से मृदा में कार्बन पदार्थ की मात्रा बढ़ जाती है।

घासें/फसलें+वृक्ष एक साथ उगाने की दशा में भूमि एवं जलसंरक्षण का कार्य और अधिक प्रभावी ढंग से होता है क्योंकि वृक्ष पानी की बूंदों को ऊपर ही रोककर उसका वेग कम करते हैं और पत्तों पर रुका हुआ पानी नीचे आने पर घासों/फसलों के बिछावन पर पड़ता है। तने द्वारा अवरोध एवं घास द्वारा भू–सतह पर बिछी चटाई जैसी संरचनाएं पानी के बहाव को कम करने के साथ–साथ उसका भूमि में अवशोषण बढ़ाती हैं।

समस्याग्रस्त भूमियों जैसे लवणीय, क्षारीय, एवं अम्लीय भूमियों को कृषिवानिकी पद्धतियों द्वारा सुधारा जा सकता है। घासें/दलहनी फसलों/वृक्षों की कुछ प्रजातियों को मृदा पी.एच. की उपयुक्तता के आधार पर पहचाना गया है जिसमें शेबरी एवं विलायती बबूल (प्रोसोपिस जूलीफ्लोरा) प्रमुख हैं। ❑

(लेखकः द्वय क्रमशः, तकनीकी अधिकारी क्षेत्रीय कृषि अनुसंधान केंद्र, मरारी, झांसी, और डी.एफ.ओ., जिला झांसी, उत्तर प्रदेश हैं।)

विशेष आर्थिक क्षेत्र - एक आकलन

वेद प्रकाश अरोड़ा

भारत के विदेश व्यापार में स्पेशल इकोनोमिक जोन यानी विशेष आर्थिक क्षेत्र और कृषि व्यापार क्षेत्र महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। अगर चीन में गुआंगडोंग और फुजियान जैसे प्रांतों के विशेष आर्थिक क्षेत्र कुल निर्यात में लगभग 40 प्रतिशत का योगदान कर रहे हैं तो भारत के निर्यात में भी इन क्षेत्रों की हिस्सेदारी निरंतर बढ़ती जा रही है। अप्रैल 2004 में निर्यात–आयात की घोषणा के बाद एक वर्ष में विशेष आर्थिक क्षेत्रों और निर्यात इकाइयों के निर्यात में 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जबकि कुछ निर्यात डालर के लिहाज से 16.76 प्रतिशत और रुपये के लिहाज से 18.8 प्रतिशत बढ़ा।

आज भारतीय अर्थतंत्र जिन तेज और मजबूत कदमों से आगे बढ़ रहा है, उन्हें निर्यात में वृद्धि ने बल प्रदान किया है। निस्संदेह आयात भी बढ़ रहा है, लेकिन इससे चिंतित होने की कोई वजह नहीं है क्योंकि आयात के एक बड़े हिस्से का उपयोग निर्यात सामग्री के लिए किया जाता है। भारत में औद्योगिक और कृषि उत्पादों के निर्यात और अन्य क्षेत्रों में चौतरफा प्रगति का परिणाम है कि सर्विस सेक्टर, औषधि क्षेत्र और सूचना संचार प्रौद्योगिकी में हम चीन से भी आगे निकल गए हैं।

केंद्रीय सांख्यिकी संगठन के अनुसार पिछले वित्त वर्ष की अंतिम तिमाही में उससे पहले वर्ष की इसी तिमाही की तुलना में हुई 10.4 प्रतिशत विकास दर विश्व दर से भी आगे निकल गई थी। **मनीला स्थित एशिया विकास बैंक ने आउटलुक 2004 नाम की ताजा रिपोर्ट में कहा कि प्राप्त संकेतों के अनुसार अगले दो–तीन वर्षों में भारत की विकास दर 7.3 प्रतिशत या इससे भी अधिक होने की संभावना है। कोई बड़ी बात नहीं कि सन 2020 तक भारत चीन की बराबरी करने लगे।** अर्थतंत्र की मजबूती का प्रत्यक्ष लक्षण और प्रमाण निर्यात में वृद्धि से मिलता है। निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिए ही वर्ष 2002–07 की पंचवर्षीय निर्यात–आयात नीति में विशेष व्यापक पैकेज की घोषणा की गई है। पैकेज में अन्य अनेक बातों के साथ–साथ विशेष आर्थिक क्षेत्रों और कृषि निर्यात क्षेत्रों को बनाने और बढ़ाने पर विशेष जोर दिया गया, ताकि निर्यात–आयात नीति के चार प्रमुख उद्देश्यों को हासिल करने में सहायता मिल सके। ये चार उद्देश्य इस प्रकार हैं–

1. विश्व व्यापार में भारत की कम से कम एक प्रतिशत हिस्सेदारी सुनिश्चित करने के लिए निर्यात में सतत वृद्धि जारी रखना। इस समय विश्व व्यापार में भारत की भागीदारी को पाने के लिए जरूरी है कि हमारे व्यापार में कम से कम 12 प्रतिशत वृद्धि हो। दूसरे शब्दों में, निर्यात को 40 अरब डालर से बढ़ाकर 80 अरब डालर वार्षिक करना होगा। निर्यात में वृद्धि से आर्थिक विकास के साथ–साथ रोजगार सृजन और गरीबी कम करने में कारगर सहायता मिलती है। इतना ही नहीं विदेश व्यापार, विकास रणनीति के दिशा निर्धारण और दशा सुधार का सतत एहसास भी कराता है।
2. उत्पादन बढ़ाने और सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक कच्चा माल मध्यवर्तियां, हिस्से–पुर्जे, उपभोग्य वस्तुएं और पूंजीगत सामान सुलभ कराकर आर्थिक विकास को गति प्रदान करना।
3. रोजगार के नए अवसर जुटाते हुए और अंतर्राष्ट्रीय स्तर की गुणवत्ता के लिए प्रोत्साहन देते हुए प्रौद्योगिकी क्षमता, भारतीय कृषि, उद्योग और सेवाओं की कार्यकुशलता बढ़ाना तथा स्पर्धात्मक शक्ति को सुधारना और
4. भारतीय उत्पादकों के लिए बराबर के अवसर जुटाते हुए उपभोक्ताओं को स्पर्धात्मक अंतर्राष्ट्रीय मूल्यों पर बढ़िया सामान और सेवाएं प्रदान करना।

इन्हीं चार उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए त्रिपुर, पानीपत और लुधियाना के तीन प्रमुख औद्योगिक समूहों को मान्यता देते हुए उन्हें निर्यात के श्रेष्ठ नगरों का दर्जा दिया गया है। इनका भी प्रमुख काम निर्यात को अधिकाधिक बढ़ाना है।

विशेष आर्थिक क्षेत्रों के पीछे यह मूल सोच थी कि भारतीय माल को विदेशी बाजारों में अधिक से अधिक सस्ता और स्तरीय बनाने के लिए अनुकूल परिस्थितियां पैदा की जाएं और उन्हें सब प्रकार की सुविधाएं प्रदान की जाएं। प्रत्येक इकाई का मूलमंत्र मुनाफा कमाना और अपने वित्तीय संसाधनों में निरंतर वृद्धि करना है। **आयात के मात्रा संबंधी अंशों और प्रतिबंधों को क्रमिक रूप से हटाने के बाद इस पहली निर्यात–आयात नीति में आयात उदारीकरण पर कम और निर्यात प्रोत्साहन पर अधिक ध्यान केंद्रित किया गया है। यह कहना अत्युक्ति नहीं होगा कि आयात कंट्रोलों का युग समाप्त हो जाने के बाद यह नीति विशुद्ध रूप से निर्यातोन्मुख है।** असल में यह नीति अंकुशमुक्त आयात और विश्वव्यापी व्यापार के बदल रहे परिदृश्य को ध्यान में रखकर बनाई गई है। वर्ष 1997 से 2002 की पिछली पंचवर्षीय योजना की समाप्ति के समय विश्वभर में आई मंदी और 11 सितंबर, 2001 को अमरीका के शहरों में लगे झटके से उबरने के लिए इस नई नीति का महत्व विशेष रूप से अधिक बढ़ गया है। तब अमरीका और यूरोपीय संघ के बड़े बाजारों और व्यापार केंद्रों की मांग में जबर्दस्त कमी होने से भारतीय निर्यात पर काफी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था। प्रतिकूल और विघ्नकारी प्रभावों के निराकरण के लिए निर्यात के मध्यकालिक और अल्पकालिक उपायों के रूप में पंचवर्षीय योजना और इसके अंतर्गत एक–एक वर्ष की योजनाएं बनाई

जाती हैं, ताकि उन्हें कुछ संशोधनों के साथ समयानुसार ढाला और संवारा जा सके। नई निर्यात–आयात नीति में लालफीताशाही समाप्त करने और बुनियादी ढांचे को मजबूत बनाने सहित विभिन्न क्षेत्रों में निर्यात बढ़ाने के उपायों पर खास जोर दिया गया है। यही कारण है कि इस नीति में विशेष आर्थिक क्षेत्रों, और कृषि निर्यात क्षेत्रों को खास महत्व प्रदान किया गया है। उनका एक अलग मुकाम है। ऐसे एक क्षेत्र के निर्माण, तथा उसमें विभिन्न प्रकार की इकाइयों को खोलने, जमाने तथा उनका उत्पादन नियोजित तरीके से बढ़ाने और निर्यात लायक बनाने के लिए लंबा सफर तय करना पड़ता है।

इन विशेष आर्थिक क्षेत्रों में विनिर्माण, नवीनीकरण, मरम्मत, सेवा कार्यों और व्यापारपरक इकाइयों का जाल बिछाने का काम निरंतर चलता रहता है। इनमें यही धुन समाई रहती है कि गुणवत्ता की कसौटी पर पूरी तरह खरा उतरने वाला, लेकिन साथ ही अपेक्षाकृत सस्ता माल बनाकर कैसे अधिक से अधिक विदेशी बाजारों में पैठ बढ़ाई जाए, अधिकाधिक विदेशी मुद्रा कमाई जाए और अपने वित्तीय संसाधनों और स्रोतों का विस्तार किया जाए। लेकिन इसके लिए उनके सामने पहले से मूल्यवर्धन, न्यूनतम कार्य निष्पादन या उत्पादन का कोई तय फार्मूला, सिद्धांत, या मानदंड नहीं होता। मुख्य लक्ष्य को सामने रखते हुए इसका निर्धारण समय, स्थिति और जरूरत के अनुसार किया जाता है, क्योंकि इनका असली काम निर्यात बढ़ाना, सीधे विदेशी निवेश आकृष्ट करना, समुचित अनुकूल वातावरण तैयार करना और लक्ष्य प्राप्ति की सुविधाएं हासिल करना है। यहां स्थापित इकाइयां भारतीय और विदेशियों दोनों की हो सकती हैं। वे अपने–अपने विशिष्ट उत्पादों में माहिर होती हैं।

यहां की इकाइयां न सिर्फ विदेशों को निर्यात के लिए बल्कि देश के अंदर अन्य भागों के लिए सामान भी तैयार करती हैं जिन्हें इस निर्यात नीति के अंतर्गत डोमेस्टिक टेरिफ एरिया यानी आंतरिक शुल्क इलाका कहा जाता है। इन कारखानों के उत्पादन को बिना किसी बाधा या असुविधा के जारी रखने तथा बढ़ाने के प्रयास किए जाते हैं। आंतरिक शुल्क इलाके से विशेष आर्थिक क्षेत्र में जाने वाले सामान को निर्यात माना जाता है और विशेष आर्थिक क्षेत्र से आंतरिक शुल्क इलाके में आने वाले माल को आयात कहा जाता है। दोनों के बीच शुल्कों की दीवार खिंची रहती है। **विशेष आर्थिक क्षेत्र शुल्क–मुक्त क्षेत्र होता है और इसे व्यापारिक गतिविधियों और शुल्कों के मामले में विदेशी क्षेत्र में माना जाता है। इस क्षेत्र की इकाइयां पूंजीगत सामान सहित कोई भी माल बिना शुल्क आयात करती हैं।** इस क्षेत्र की इकाइयां अपने यहां कारखाने या उद्यम स्थापित करने के लिए शुल्क का भुगतान किए बिना आंतरिक शुल्क इलाके से सामान आयात कर सकती हैं लेकिन इस इलाके को उत्पादों की बिक्री के लिए पूरे शुल्क का भुगतान करना होता है। विशेष आर्थिक क्षेत्र की इकाइयों के सामने एकमात्र उद्देश्य यह रहता है कि उन्हें विदेशी मुद्रा कमाने वाली ठोस और मजबूत इकाइयां बनना होगा। उनकी विदेशी मुद्रा की विशुद्व आय का आकलन वाणिज्यिक उत्पादन शुरू होने से लेकर पांच वर्ष तक की अवधि के लिए किया जाएगा। यह आकलन एक अलग फार्मूले से किया जाएगा जो प्रक्रिया पुस्तक खंड एक के सातवें पैरे के चौथे हिस्से में डाल दिया गया है।

इकाइयों के उत्पादन, निर्यात और क्रियाकलापों पर एक समिति बराबर नज़र रखती है, जिसका अध्यक्ष कस्टम विभाग का आयुक्त होता है और सीमा शुल्क अधिकारी इसमें सदस्य की हैसियत से शामिल होते हैं। समिति यह भी देखती है कि सोना, चांदी और प्लेटिनम के आभूषणों और अन्य वस्तुओं को बनाने में छीजन से नुकसान होता है और वह निर्धारित प्रतिशत की सीमा के अंदर है या नहीं। अगर कोई इकाई विकास आयुक्त को विदेशी मुद्रा कमाने के कानूनी रूप से दिए गए लिखित वचन का पालन नहीं करती, तो उसे दंड दिया जा सकता है। ये इकाइयां अधिक से अधिक धन कमा सकें कि यहां के निर्यातकों को सस्ती और अंतर्राष्ट्रीय दरों पर कर्ज प्राप्त हो और इन क्षेत्रों के देसी और विदेशी बैंकों के काम के सुचारू संचालन की राह में कोई अड़चन न पैदा हो।

कामकाज को तेजी से, समय पर और सुचारू रूप से पूरा करने के लिए कुछ उत्पादों और उत्पादन प्रक्रिया का ठेका छोटे ठेकों में बांटकर अन्य ठेकेदारों को दे दिया जाता है। इकाइयों के अपनी पसंद के फार्मों पर हिसाब–किताब रखने की अनुमति लेकर सारा काम सरल और विकेंद्रित कर दिया गया है। **चाहे काम के तौर–तरीके हों या नियम अथवा कोई बिक्री या खरीद सबमें इन विशेष आर्थिक क्षेत्रों को रियायतों और प्रोत्साहन देने में कोई कसर नहीं रखी जाती। यहां की इकाइयों को पूंजीगत और कच्चे सामान पर आयात शुल्क और उत्पादन शुल्क में छूट दी जाती है।** इस क्षेत्र से बाहर की कई खरीदों पर ली गई केंद्रीय बिक्रीकर राशि वापस दे दी जाती है। यहां की इकाइयों को विनिर्माण क्षेत्र में शत–प्रतिशत विदेशी इक्विटी सहभागिता की अनुमति दी जाती है। इनके लिए बुनियादी ढांचे की सुविधाओं का स्तर ऊंचा रखा जाता है। विशेष आर्थिक क्षेत्र की इकाइयां जो भी आयात करती हैं, उसमें उनके अपने प्रमाणीकरण से काम चल जाता है। ये विशेष आर्थिक क्षेत्र सार्वजनिक, निजी और संयुक्त सेक्टर में स्थापित किए जा सकते हैं। राज्य सरकारें भी इनकी स्थापना कर सकती हैं।

इस समय चौदह विशेष आर्थिक क्षेत्रों में काम हो रहा है और चौदह के ही निर्माण की मंजूरी दी जा चुकी है। पहली सूची में मुंबई का सीप्स, गुजरात का कांडला, केरल का कोच्चि, तमिलनाडु का मद्रास (चेन्नई), आंध्र प्रदेश का विशाखापत्तनम, पश्चिम बंगाल का फाल्टा, उत्तर प्रदेश का नोएडा, गुजरात का सूरत, मध्य प्रदेश का इंदौर, पश्चिम बंगाल का मणि कंचन (साल्ट लेक) राजस्थान का सीतापुर (जयपुर), राजस्थान का ही बोरनाडा (जोधपुर), महाराष्ट्र का कोपाटा (महामुंबई) और उत्तर प्रदेश का मुरादाबाद क्षेत्र शामिल है। स्वीकृत हुए विशेष आर्थिक क्षेत्रों में महाराष्ट्र का नवी मुंबई, गुजरात का पोसिक, तमिलनाडु का ननगुनेरी, उत्तर प्रदेश का भदोही (कानपुर), उत्तर प्रदेश का ही ग्रेटर नोएडा, आंध्र प्रदेश का विशाखापत्तनम, आंध्र प्रदेश का ही काकीनाडा, उड़ीसा का पाराद्वीप (गोपालपुर), अहमदाबाद का मूंदडा, गुजरात का दाहेज, कर्नाटक का बैकम पडी, झारखंड का रांची, केरल का वेल्लारपडम और कर्नाटक का हासन इलाका सम्मिलित हैं। ये क्षेत्र एक हजार हेक्टेयर से कम इलाके में बनाने की अनुमति नहीं है। लेकिन न्यूनतम

भूमि की यह शर्त उत्पाद विशेष या बंदरगाह/हवाई अड्डे वाले विशेष आर्थिक क्षेत्रों पर लागू नहीं होती। इस क्षेत्र को चाहे कहीं भी सरकारी, गैर–सरकारी अथवा संयुक्त सेंटर में किसी भी रूप में बनाया जाए, उसकी प्रत्येक इकाई, शत–प्रतिशत निर्यात इकाई के रूप में काम करेगी। लेकिन इसका पालन करते हुए भी यह देखना होगा कि ये क्षेत्र देश की समग्र अर्थव्यवस्था तथा निर्यात–आयात के बड़े दायरे से समायोजित रहें। साथ ही इकाई का इकाई के साथ, एक–एक इकाई का अपने पूरे क्षेत्र के साथ, एक क्षेत्र का दूसरे तथा क्षेत्र का राज्य सरकार के साथ तथा सबके ऊपर केंद्र के साथ तालमेल और एकसुरता भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। साथ ही यह पूरा तालमेल देश के समग्र परिदृश्य और पूरे अर्थतंत्र को ध्यान में रखते हुए कायम होना चाहिए क्योंकि समग्र अर्थव्यवस्था का कुशल, मुस्तैद, गतिशील, आक्रामक तथा जमीन से जुड़े रहकर पायदार होना जरूरी है। इस तालमेल का ही परिणाम है कि जापान और कोरिया एक शिखर से दूसरे शिखर की ओर बढ़ते चले गए हैं। बाद में चीन ने भी उनकी राह पर चलकर समूचे अर्थतंत्र में प्राण फूंकने के लिए विशेष आर्थिक क्षेत्रों की शृंखला कायम करने का बीड़ा उठाया।

वित्तवर्ष 2001 में भारत सरकार ने उत्पादन और निर्यात की वृद्धि दर बढ़ाने के लिए चीन की तर्ज पर विशेष आर्थिक क्षेत्र बनाने के लिए कदम उठाते हुए उन्हें ढेरों सुविधाएं दीं। लेकिन इसके बावजूद भारत के विशेष आर्थिक क्षेत्र और उनकी कृषि प्रसंस्करण निर्यात इकाइयां चीन से काफी पिछड़ी हुई हैं। अर्थशास्त्रियों के अनुसार चीन के विशेष आर्थिक क्षेत्रों की सफलता के कई राज हैं। इन क्षेत्रों का आकार विशाल है और वे सैकड़ों वर्ग मीलों तक फैले हुए हैं जबकि हमारे विशेष आर्थिक क्षेत्र आठ सौ से एक हजार हेक्टेयर जमीन तक सीमित और सिमटे हैं। दूसरे, चीन के आर्थिक क्षेत्रों में श्रम कानून लागू नहीं हैं, जबकि भारत में श्रम कानून कहीं उदार हैं। चीन के आर्थिक क्षेत्रों की स्थापना और विकास एकाधिकारवादी समाजवादी ढांचे के अंदर की गई है। वहां राज्यों और श्रमिकों द्वारा इस या उस बात की आड़ में विरोध किए जाने का सवाल ही नहीं है। यहां हायर एंड फायर की नीति नहीं अपनाई जाती। तीसरे, चीन के कुछ आर्थिक क्षेत्र बहुत पहले वर्ष 1979 में स्थापित किए गए थे। ये बनाए भी ऐसे क्षेत्रों में गए हैं जो समुद्र के पास हैं और जहां बंदरगाह की सुविधाएं उपलब्ध हैं।

भारत ने आर्थिक सुधारों का बीड़ा लगभग 13 वर्ष पहले 1991 के मध्य में उठाया था जबकि आर्थिक क्षेत्रों को बनाने की घोषणा लगभग दस वर्ष बाद सन् 2000 में की गई। चीन भौगोलिक दृष्टि से आकार में भारत से दुगुना है और भारत की तुलना में सात गुना अधिक विदेशी प्रत्यक्ष निवेश आकृष्ट करता है। संयुक्त राष्ट्र की वर्ष 2003 की विश्व पूंजीनिवेश रिपोर्ट के अनुसार इतने अधिक विदेशी पूंजी निवेश का मुख्य श्रेय विदेशों में रहने वाले चीनी व्यापारियों, चीनी प्रतिष्ठानों और अन्य चीनियों को जाता है। इसके कुछ अन्य कारण भी हैं जैसे विदेशों में रहने वाले चीनियों की संख्या प्रवासी भारतीयों के मुकाबले अधिक है। ये चीनी न सिर्फ उद्यमशील हैं बल्कि चीन में उनके पारिवारिक संबंधों में प्रगाढ़ता पूर्ववत बनी हुई है। दूसरी तरफ भारतीयों की संख्या कम तो है ही, प्रतिशत और संख्या की दृष्टि से वे उद्यमी कम और पेशेवर अधिक हैं। भारत में अपने परिवारों और रिश्तेदारों के साथ उनके संबंधों की डोर भी कमजोर होती जा रही है। सबसे बढ़कर भारत में निवेश के लिए उनके संसाधन और स्रोत भी चीनियों की तुलना में कम हैं। उदाहरण के तौर पर 1990 में चीन में 3.5 अरब डालर का विदेशी प्रत्यक्ष निवेश हुआ है और वह बढ़ते–बढ़ते वर्ष 2002 में 52.7 अरब डालर तक पहुंच गया। भारत में इसी अवधि में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश 0.4 अरब यानी 40 करोड़ डालर से बढ़कर 5.5 अरब डालर ही हुआ। सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत की दृष्टि से चीन में यह निवेश 3.2 प्रतिशत और भारत में 1.1 प्रतिशत रहा।

चीन में आर्थिक क्षेत्रों के चमत्कारी कार्य निष्पादन और पूंजीप्रवाह का एक बड़ा कारण यह भी है कि हांगकांग के चीनी इन क्षेत्रों में जबर्दस्त सीधा पूंजीनिवेश करते हैं। हांगकांग के चीन का हिस्सा बनने के बाद तो उन्हें किसी भी पूंजीवादी या लोकतंत्रवादी देश की पूंजी को आकृष्ट करने की चिंता नहीं रही, जितनी कि हांगकांग में अपने चीनी भाइयों के पूंजीनिवेश की। उनका यह निवेश कुल विदेशी निवेश का 40 से 50 प्रतिशत होता है जिसका अधिकतर हिस्सा इन विशेष क्षेत्रों में लगाया जाता है। चीन के निर्यात का लगभग 20 प्रतिशत हिस्सा हांगकांग भेज दिया जाता है, वहां के आर्थिक क्षेत्रों से इनके 80 प्रतिशत का पुनर्निर्यात कर दिया जाता है। स्वयं हांगकांग में इन इकाइयों में सीधे निर्मित माल का 20 प्रतिशत हिस्सा अन्य देशों को भेजा जाता है। ब्रिटेन का यह पूर्व उपनिवेश चीन के निर्यात का मुख्य द्वार और आधार बन गया है। चीन के विशेष आर्थिक क्षेत्रों की एक अन्य विशेषता यह है कि चीन इन क्षेत्रों में निवेश को अपनी समग्र आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए चाहता है। निर्यात का महत्व है लेकिन आर्थिक छवि को निखारने के लिए, क्योंकि अर्थव्यवस्था के विस्तार और मजबूती के साथ ही निर्यात भी खुद आगे बढ़ने लगता है।

जहां तक प्रवासी भारतीयों का संबंध है उन्हें विदेश व्यापार या वाणिज्य का अपेक्षाकृत अनुभव नहीं है। वे प्रमुख रूप से निर्माण टैक्नोलॉजी और सूचना संचार प्रौद्योगिकी में माहिर हैं। जहां हांगकांग के चीनी सस्ती मजदूरी का लाभ उठाते हुए अपने माल को विश्व बाजार में अधिक सस्ता और स्पर्धात्मक बनाने पर ध्यान देते हैं, वहां प्रवासी भारतीय भारत के आंतरिक बाजार पर ही नजर रखते हैं और यहीं पूंजी लगाना हितकर समझते हैं। इससे निस्संदेह विशेष आर्थिक क्षेत्रों मे संतोषजनक प्रगति हुई है और हो रही है, भले ही वह अपेक्षा से कुछ कम रही है। हमारे विशेष आर्थिक क्षेत्रों और 45 कृषि नियात क्षेत्रों के नए–नए इलाकों में नए–नए रंग भर रहे हैं, उन्हें बहुआयामी स्वरूप दे रहे हैं। अगर इन्हें अधिकाधिक मूलभूत सुविधाएं प्राप्त हों और चार या छह लेन वाले राजमार्गों का जाल बंदरगाहों तक बिछता चला जाए तो निर्यात क्षेत्रों में सूर्योदय में देर नहीं लगेगी और हम चीन के आर्थिक क्षेत्रों से होड़ लेते हुए कम से कम उनके बराबर तो हो ही जाएंगे। सवाल समय का है, सुविधाओं या संकाय के अभाव का नहीं। ❑

268, सत्यनिकेतन, मोतीबाग,
नई दिल्ली–110021

सफेद मूसली अत्यंत लाभकारी फसल

एम. भारती

परंपरागत फसलों के स्थान पर नई और ऐसी फसलें उगाई जाएं जिनकी आपूर्ति कम और मांग अधिक है। ऐसी ही एक प्रमुख वनौषधि सफेद मूसली है। इसके सेवन से तन-मन को नई शक्ति मिलती है। इस जड़ी को उगाकर आर्थिक निर्बलता को जड़ से दूर किया जा सकता है। इसीलिए इसे सफेद सोना, श्वेत शिलाजीत तथा भारतीय जिनसेंग भी कहा जाता है। हमारे देश में इसकी व्यावसायिक खेती करने की असीम संभावनाएं हैं।

स्वरोजगार की दिशा में व्यावसायिक खेती ही आर्थिक दशा सुधार और संवार सकती है। कृषि के जरिए ग्रामीण विकास का मनोहारी सपना सच हुआ है। हमारे देश में इसीलिए सदियों से कृषि की प्रधानता रही है, आज भी है और आगे भी रहेगी। ऐसे में बेहद जरूरी है विविधीकरण पर ध्यान दिया जाए।

परंपरागत फसलों के स्थान पर नई और ऐसी फसलें उगाई जाएं जिनकी आपूर्ति कम और मांग अधिक है। ऐसी ही एक प्रमुख वनौषधि सफेद मूसली है। इसके सेवन से तन–मन को नई शक्ति मिलती है। इस जड़ी को उगाकर आर्थिक निर्बलता को जड़ से दूर किया जा सकता है। इसीलिए इसे सफेद सोना, श्वेत शिलाजीत तथा भारतीय जिनसेंग भी कहा जाता है। हमारे देश में इसकी व्यावसायिक खेती करने की असीम संभावनाएं हैं।

देश के अधिकांश भागों में सफेद मूसली की खेती की जा सकती है लेकिन सफलतापूर्वक औषधीय कृषि के लिए यह परम आवश्यक है कि नई, ठोस और पूरी जानकारी पहले अवश्य एकत्रित कर ली जाए। वैसे भी सफेद मूसली का कुनबा बहुत बड़ा है। दुनियाभर में इसकी अनेक किस्में हैं। उनमें से करीब 20 किस्म की मूसली हमारे देश में होती है। इनमें से क्लोरोफाइटम बोरिविलिएनम प्रजाति को सर्वश्रेष्ठ माना जाता है।

कृषि वैज्ञानिकों का कहना है कि सफेद मूसली की फसल उगाने के लिए जब भूमि का चुनाव करें तो एक बात यह ध्यान में रखें कि जमीन में जलभराव न हो यानी कि खेत में जलनिकास की व्यवस्था पूरी होनी चाहिए। वरना खेत में पानी ठहरने से जड़ें सड़ जाएंगी। दोमट या बलुई दोमट भूमि में उपज अच्छी होती है। उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु में सफेद मूसली की खेती अच्छी की जा सकती है।

मई के मध्य से जुलाई के पहले हफ्ते तक का समय मूसली बोने के लिए अच्छा रहता है। प्रायः आलू की तरह मेड़ बनाकर इसे बोया जाता है। बीज के लिए मूसली के कंद की जरूरत पड़ती है। प्रति एकड़ 3 से 5 क्विंटल गीले मूसली के कंद लगाए जाते हैं। 10–15 ग्राम के क्राउनयुक्त हिस्सों में बांटकर 8–10 इंच की दूरी पर 2–2 इंच गहराई में इन्हें बोया जाता है। लगभग सात माह में फसल तैयार हो जाती है। **करीब 25 क्विंटल गीली मूसली की उपज प्राप्त होती है जो सूखकर लगभग चार क्विंटल रह जाती है। बाजार में इसे औसतन डेढ़ हजार रुपये प्रति किलो तक बेचा जा सकता है। इस प्रकार से देखा जाए तो दो ढाई लाख रुपये एकड़ की लागत निकालकर भी 6 लाख रुपये एकड़ की रकम मूसली बेचने से मिल जाती है।** इसका मतलब है सीधे कम से कम 3 लाख रुपये एकड़ का लाभ हो जाता है जो दूसरी फसलों की अपेक्षा कहीं ज्यादा है।

इंदौर, मुंबई तथा दिल्ली आदि कई बड़े शहरों में सफेद मूसली की बिक्री बड़े पैमाने पर होती है। इधर केंद्रीय औषधीय एवं सुगंध पौधा संस्थान "सीमैप", लखनऊ, उत्तर प्रदेश तथा उसके पंतनगर स्थित प्रेक्षण केंद्र के वैज्ञानिकों ने सफेद मूसली व उसकी खेती को बढ़ावा देने के संबंध में सराहनीय कार्य किया है। इच्छुक कृषक अपनी जिज्ञासा अथवा शंका के समाधान हेतु इनसे संपर्क करके विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

ध्यान देने योग्य बात है कि केंद्र सरकार का स्वास्थ्य मंत्रालय जड़ी–बूटियों की खेती को प्रोत्साहित करने के लिए विशेष प्रयास कर रहा है। सुखद भविष्य की इस आहट को पहचान कर कृषकों को खुद पहल करते हुए सुअवसर का लाभ उठाना चाहिए। राष्ट्रीय औषधीय पादप बोर्ड, चंद्रलोक, 36 जनपथ, नई दिल्ली द्वारा संविदा के आधार पर जड़ी–बूटियों की कांट्रेक्ट फ्रामिंग कराई जाती है। इसमें 30 प्रतिशत या 9 लाख रुपये तक का अनुदान भी दिया जाता है।

मूसली की लाभकारी खेती करके लाभ उठाने वाले किसानों की संख्या बहुत तेजी से बढ़ रही है। राजस्थान, उत्तरांचल, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश आदि में किसान परपंरागत फसलों को छोड़कर अब सफेद मूसली उगा रहे हैं।

सफलता की कहानी

सफेद मूसली उगाकर बदली तकदीर

इंसान यदि चाहे तो क्या नहीं कर सकता! जानकारी, लगन और मेहनत के बल पर सफलता के शीर्ष पर पहुंचने वालों में एक नाम है श्रीधर पाटीदार का जो ग्राम जोतपुर, तहसील मनावर, जिला धार, मध्य प्रदेश के निवासी हैं। इन्होंने सफेद मूसली की खेती में कीर्तिमान स्थापित किए हैं।

औषधीय कृषि के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करने के लिए इन्हें राष्ट्रीय स्तर के चार पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। मध्य प्रदेश सरकार की ओर से वर्ष 2003 का वनोषधि कृषि भूषण पुरस्कार तथा 25 हजार रुपये मिल चुके हैं।

आज श्री पाटीदार के पास सौ एकड़ का विशाल फार्म है जिसमें वह अपने तीन पुत्रों के साथ सफेद मूसली की उन्नत खेती करते हैं, वैज्ञानिक तरीके अपनाते हैं तथा कई गुना अधिक पैदावार लेते हैं।

विज्ञान स्नातक श्रीधर पाटीदार अपनी गहरी रुचि के कारण आज प्रगतिशील कृषकों तथा विशेषज्ञों में गिने जाते हैं। इन्होंने अपना सफर 22 वर्ष पूर्व फलों के बाग लगाकर शुरू किया था। उसमें भी उन्होंने रिकार्ड पैदावार लेकर दिखाई। फिर इसके बाद मिर्च, टमाटर और कपास की भी लाजवाब खेती की। उद्यानों में उन्होंने इतनी ज्यादा पैदावार लेकर दिखाई कि अपने इलाके में वह एक मिसाल बन गए हैं। नब्बे ग्राम वजन के बेर तथा प्रति एकड़ 18 क्विंटल तक सूखी मिर्च का आश्चर्यजनक उत्पादन करके दिखाया।

इस साधारण किसान के असाधारण कार्यों को देखकर इलाके में दूसरों ने भी शिक्षा और प्रेरणा ली और देखते ही देखते पूरे निमाड़ इलाके की काया ही पलट गई। जो स्वयं दीपक बनकर अंधेरा हरते हैं वे दूसरों के मन में भी प्रेरणा की बाती जला देते हैं। ठीक यही कार्य पाटीदार ने भी किया है। आज उनके क्षेत्र में फल, सब्जी और औषधीय कृषि की क्रांति हो रही है। स्वयं अपना विकास एवं उन्नति करने की यह एक सच्ची गाथा है।

वे चाहते हैं कि कोई भी भारतीय कृषक गरीब न रहे। इसके लिए वे किसानों को मुफ्त प्रशिक्षित भी करते हैं तथा उनका मार्गदर्शन भी करते हैं। परिणामस्वरूप देश–विदेश के अनेक जिज्ञासु किसान उनके खेतों पर आते रहते हैं और उनसे उन्नत किस्मों के बीज आदि ले जाते हैं। श्री पाटीदार का मानना है कि हमारे देश में रोटी और पैसे से भी कही अधिक गरीबी आज भी गांवों में सूचना की है। आम किसान को नई, ठोस और पूरी जानकारी आसानी से नहीं मिलती।

आज के समय में सफेद मूसली के बीज यानी कंद असली और बढ़िया क्वालिटी के हों। उन्हें ठीक तरीके और अंतर से बोया जाए। बायो फर्टीलाइजर दी जाए और परफैक्ट तरीके से खेती की जाए। उनके पुत्रों ने भी उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी कृषि को ही अपना रोजगार बनाया है। कई अन्य लोगों को भी इन्होंने अपने कृषि व्यवसाय में रोजगार दे रखा है। सजग, सक्रिय और सदैव सचेष्ट रहना उनका स्वभाव है। इसीलिए नियमित रूप से दर्जनों पत्र–पत्रिकाएं पढ़ते रहते हैं ताकि वक्त के साथ चल सकें। जीवन में परिश्रम, ईमानदारी और कर्मठता को वे अपना आदर्श मानते हैं। सफेद मूसली की अत्यंत लाभकारी खेती के बारे में तकनीकी जानकारी देने के लिए हर समय तैयार रहते हैं। सभी पत्रों के उत्तर देते हैं। श्री पाटीदार के अनुसार प्रति एकड़ सफेद मूसली उगाने में करीब सवा दो लाख रुपये की लागत, 6 लाख रुपये की उपज और पौने चार लाख रुपये का लाभ होता है। बशर्ते किस्म अव्वल और तकनीक उत्तम हों। ❑

सफेद मूसली का प्रति एकड़ व्यय का विवरण

रुपये में

1.	प्लांटिग मेटेरियल की लागत–400 किग्रा./दर 300 रुपये प्रति किलोग्राम	1,20,000/–
2.	गोबर अथवा कम्पोस्ट खाद 10 ट्राली	8000/–
3.	खेत की तैयारी	3000/–
4.	बायोफर्टिलाइजर	10,000/–
5.	बायोफंगीसाइर्ड +टॉनिक	7000/–
6.	अ–मजदूर खर्च, रोपाई, निराई, खुदाई खाद देना आदि	25,000/–
	ब–मजदूर खर्च, (छिलाई, सुखाना, पैकिंग)	40,000/–
7.	विविध खर्च	7000/–
	कुल व्यय	2,20,000/–

सफेद मूसली के व्यय का विवरण

400 किग्रा. सूखी मूसली, (20 क्विंटल गिली मूसली) (1500 रुपये प्रति किलो की दर से)	=	6,00,000/–
कुल आय	=	6,00,000/–

कुल शुद्ध लाभ : 6,00,000 – 2,20,000 = 3,80,000/–रुपये

77– गांधी नगर, पो. इज्जत नगर,
बरेली–243122 (उ.प्र.)

वेनिला के निर्यात की अपार संभावनाएं

आर.बी.एल. गर्ग

भारत में कुल वेनिला उत्पादन 100 टन है जबकि इसकी अंतर्राष्ट्रीय मांग 500 टन आंकी गई है। शोधित वेनिला फलियों का अंतर्राष्ट्रीय मूल्य जो 153 डालर प्रति किलो था, 2003 में बढ़कर 500 डालर प्रति किलो हो गया। वेनिला विशेषज्ञों का मानना है कि चूंकि वेनिला की अंतर्राष्ट्रीय मांग तीव्र गति से बढ़ रही है, कृषि की दृष्टि से अगले पांच वर्षों तक इसके मूल्य आकर्षक ही बने रहेंगे। ऐसी स्थिति में अंतर्राष्ट्रीय विपणनकर्ता के रूप में भारत की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है।

वेनिला एक आरोहक एवं उष्णकटिबंधीय आर्किड है जो अपनी मनमोहक गंध और बेहतरीन स्वाद के लिए दुनियाभर में जानी जाती है। यह आर्किडेसी परिवार की चौड़े पत्तों की सफेद फूलों तथा लंबी मांसल फलियों वाली लता है जिसका वानस्पतिक नाम वेनिला प्लेनीफोलिया एंड्रयूज है। पुष्पीय पौधों का यह सबसे बड़ा परिवार है जिसकी 110 से अधिक प्रजातियां हैं। वेनिला की दो अन्य प्रमुख प्रजातियां हैं: वेनिला पोम्पाना सीड तथा वेनिला टेहिटैंसिस जो व्यावसायिक दृष्टि से कृषियोग्य हैं। वेनिला प्लेनीफोलिया एक औषधियुक्त बहुवर्षी लता है, जो पेड़ों या अन्य किसी के सहारे 10 से 15 मीटर तक चढ़ती है। इसकी पकी हुई फलियां प्राकृतिक 'वेनिलिन' का अद्भुत स्रोत हैं जो पकवान विशेषज्ञों तथा उत्कृष्ट स्वाद अनुरागियों की पहली पसंद है। वेनिला कृषि बालुई दुम्मट से लेकर मखरली तक कई प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है। यह मैक्सिको देश की उपज है जिसे बाद में स्पेन लाया गया।

वर्तमान में व्यावसायिक स्तर पर वेनिला कृषि मेडागास्कर, इंडोनेशिया, कोमोरोस, उगांडा, मैक्सिको एवं भारत में की जाती है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक वेनिला कृषि पर मैक्सिको का एकाधिकार था लेकिन अब यह स्थान अफ्रीका के निकटवर्ती द्वीप मेडागास्कर ने ले लिया है जहां 25,000 हेक्टेयर भूमि पर वेनिला कृषि की जाती है। इंडोनेशिया वेनिला का दूसरा बड़ा उत्पादक देश है। मैक्सिको अब वेनिला का सीमांत उत्पादक देश रह गया है।

भारत में वेनिला को मात्र 100 वर्ष पूर्व लाया गया था लेकिन व्यावसायिक स्तर पर इसकी कृषि 5–10 वर्ष पुरानी घटना है। केरल, कर्नाटक व तमिलनाडु के कुछ लघु व सीमांत कृषकों ने वेनिला की कृषि आरंभ की थी लेकिन धीरे–धीरे अब बड़े बागानों में भी कृषि की जाने लगी है। दिलचस्प बात यह है कि वेनिला कृषि नारियल तथा काफी बागानों में अंतःफसल के रूप में उगाई जा रही है। दूसरी ओर कुछ अन्य राज्यों जैसे महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, अंडमान तथा उत्तर–पूर्वी राज्यों में वेनिला कृषि आरंभ हो चुकी है। चूंकि प्राविधित वेनिला फली (जो वेनेलिन का स्रोत है) का अंतर्राष्ट्रीय मूल्य काफी आकर्षक है तथा दूसरी ओर पिछले पांच वर्षों में पारंपरिक नकद मसाला फसलों (इलायची, काली मिर्च व हल्दी) का अंतर्राष्ट्रीय मूल्य अनाकर्षक बना हुआ है, ऐसे में भारत में वेनिला कृषि की व्यापक संभावनाएं हैं। उदाहरण के लिए पिछले तीन वर्षों में काली मिर्च का प्रति इकाई मूल्य 80 से 85 रुपये के बीच स्थिर रहा है। यही बात हल्दी, जीरा व मैथी के बारे में कही जा सकती है जबकि इसी अवधि में छोटी इलायची का प्रति इकाई मूल्य 800 रुपये से गिरकर 500 रुपये के आसपास ही रह गया है। दूसरी ओर शोधित वेनिला का प्रति इकाई मूल्य जो 2001 में 8,000 रुपये प्रति किलो के इर्दगिर्द था वह 2003 में बढ़कर 11,000 रुपये को पार कर गया। यही कारण है कि काली मिर्च, छोटी इलायची व हल्दी के निर्यात क्रमशः कम हो रहे हैं या स्थिर जबकि वेनिला का निर्यात, जो 1998–99 में मात्र 4.60 लाख रुपये था, 2002–03 में 20 करोड़ रुपये को भी पार करने का अनुमान है।

अपरिमित संभावनाएं

भारत में कुल वेनिला उत्पादन 100 टन है जबकि इसकी अंतर्राष्ट्रीय मांग 500 टन आंकी गई है। शोधित वेनिला फलियों का अंतर्राष्ट्रीय

तालिका–1

वेनिला कृषि क्षेत्र, उत्पादन व प्रति एकड़ उपज

राज्य	उपज क्षेत्र (हे.)	कुल उत्पादन (टन)	वेनिला (शोधित) किलो प्रति एकड़
केरल	239	19	78
कर्नाटक	545	54	100
तमिलनाडु	130	19	147
कुल	**914**	**92**	**101**

तालिका–2

प्रमुख मसाला निर्यात मदें

(मात्रा टन व मूल्य करोड़ रुपये में)

मद	1999–2000		2000–2001		2001–2002		2002–2003*	
	मात्रा	मूल्य	मात्रा	मूल्य	मात्रा	मूल्य	मात्रा	मूल्य
कालीमिर्च	42824	885	21830	380	24000	221	2000	166
छोटी इलायची	676	33	1545	85	900	56	550	38
हल्दी	37776	123	44627	116	35000	85	32000	99
वेनिला	11.67	1.05	22.01	5.05	27.30	17.50	25.16	22.25

* अनुमानित

स्रोत : स्पाइसिज बोर्ड, कोचिन

मूल्य, जो पहले 153 डालर प्रति किलो था, 2003 में बढ़कर 500 डालर प्रति किलो हो गया। तीव्र गति से वेनिला में मूल्यवृद्धि का कारण हाल के तूफान को बताया जा रहा है जिसने मेडागास्कर की 600 टन की शोधित वेनिला फलियों का सफाया कर दिया। लेकिन वेनिला विशेषज्ञों का मानना है कि चूंकि वेनिला की अंतर्राष्ट्रीय मांग तीव्र गति से बढ़ रही है, कृषि की दृष्टि से अगले पांच वर्षों तक इसके मूल्य आकर्षक ही बने रहेंगे। ऐसी स्थिति में अंतर्राष्ट्रीय विपणनकर्ता के रूप में भारत की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है।

पूरी दुनिया में खाद्यसामग्री, मिठाइयां, कस्टर्ड, पुडिग, आइसक्रीम, औषधियों तथा पेयों में वेनिला के बढ़ते उपयोग ने वेनिला उत्पादक व निर्यातक के रूप में भारत की संभावनाओं को और अधिक सशक्त किया है। दूसरे, भारत में वेनिला कृषि की उपयुक्त सिंचित भूमि व जलवायु भी है। इसमें भी कोई संदेह नहीं कि भारतीय कृषक में नवीन कृषि तकनीकी व उन्नत कृषि प्रणालियों के प्रति ग्रहणशीलता भी है तथा स्वयं को नए आर्थिक उपक्रमों में ढालने की अदभुत क्षमता भी। मसाला कृषि में भारत के महत्वपूर्ण योगदान को इस तथ्य से भी प्रकट किया जा सकता है कि भारत में उगाए जा रहे वेनिला में 'वेनिलिन' की मात्रा मेडागास्कर व इंडोनेशिया दोनों की ही उपलब्ध वेनेलिन मात्रा से अधिक है। इंडोनेशिया व मेडागास्कर द्वारा उत्पादित एक किलो सूखी फलियों में वेनेलिन की मात्रा क्रमशः एक प्रतिशत तथा 1.8 प्रतिशत है जबकि भारतीय सूखी वेनिला फलियों में यह मात्रा तीन प्रतिशत तक है।

समस्याएं

वेनिला कृषि भारत के लिए नया अनुभव है, यद्यपि यह सही है कि पारंपरिक रूप से हमारा देश अनेकानेक दुर्लभ मसालों का अक्षय भंडार माना जाता है। जिस प्रकार वेनिला दूसरा सबसे महंगा स्वाद व गंधयुक्त मसाला है उसी प्रकार वेनिला कृषि भी उतनी ही जटिल व जोखिमपूर्ण है।

समय के परिवर्तन के साथ–साथ अनुभव व ज्ञान ने वेनिला कृषि में व्याप्त जटिलताओं को काफी सरल बना दिया है। वेनिला के नए कृषकों के लिए अनिश्चितताओं को दूर करने व वेनेलिन की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए रोपण से लेकर प्रसंस्करण या शोधन तक की सभी क्रियाओं के लिए उपयुक्त प्रशिक्षण आवश्यक है। **अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर वेनिला के गुणवत्ता संबंधी प्रतिमान निर्धारित किए गए हैं। गुणवत्ता की कमी वेनिला के अंतर्राष्ट्रीय मूल्य को प्रभावित कर सकती है। अतः कतरनों के रोपण से लेकर लताओं के विकसित होने, पुष्पण, पुष्प परागण, पौध संरक्षण, कटाई प्रसंस्करण संबंधी प्रशिक्षण आवश्यक है।**

वेनिला प्रसंस्करण की पर्याप्त जानकारी न होने के कारण आज भी कृषक फलियों के रूप में विपणन करते हैं जिन्हें थोड़ी मेहनत व ज्ञान के बल पर प्रसंस्करण द्वारा मूल्यवान बनाया जा सकता है। वेनिला की कच्ची फलियों में कोई रुचि या गंध नहीं होती जिन्हें यथोचित प्रसंस्करण द्वारा एक एंजाइमी क्रिया के फलस्वरूप सुगंधित व सुवाषित किया जा सकता है और तब उनका पांच गुना अधिक मूल्य मिल सकता है। यह भी आवश्यक है कि कृषकों को उचित मूल्य पर पौधसामग्री उपलब्ध कराई जाए तथा यथासंभव आर्थिक सहायता प्रदान हो। ❑

प्राचार्य (सेवानिवृत्त)
14, फ्रेंडस एन्क्लेव, ओल्ड रोडवेज डिपो,
सर्किट हाउस के सामने, भरतपुर

कुरुक्षेत्र मंगाने का पता

विज्ञापन और प्रसार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड–4, लेवल–7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110066

मूल्य एक प्रति	:	सात रुपये
वार्षिक शुल्क	:	70 रुपये
द्विवार्षिक	:	135 रुपये
त्रैवार्षिक	:	190 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	700 रुपये (वार्षिक)

आपका डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर **निदेशक, प्रकाशन विभाग** को **नई दिल्ली** में देय होना चाहिए।

एन.सी.डी.सी. की योजनाओं पर एक नजर

जय भगवान त्यागी

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (एन.सी.डी.सी.) की स्थापना सहकारी सिद्धांतों पर आधारित कृषि उत्पादों के उत्पादन, प्रसंस्करण, विपणन, भंडारण, आयात–निर्यात, खाद्य पदार्थों तथा अधिसूचित वस्तुओं के कार्यक्रमों की आयोजना तथा संवर्धन हेतु संसद के एक अधिनियम के अंतर्गत मार्च, 1963 में भारत सरकार द्वारा की गई थी, जिसका प्रधान कार्यालय नई दिल्ली में है। अनुसूचित जातियों/जनजातियों की सहकारिताओं, कुक्कुटपालन, डेरी, मत्स्यपालन जैसे कमजोर वर्ग के कार्यक्रमों को शामिल करने हेतु इसके क्षेत्र का विस्तार करने के लिए वर्ष 1974 में निगम के अधिनियम में संशोधन किया गया। इसकी परिधि में कृषि उद्यान, पशुपालन, मत्स्यपालन, अन्य संबद्ध कार्यकलापों, औद्योगिक सहकारिताओं के औद्योगिक माल, अधिसूचित सेवाओं को सम्मिलित करने हेतु 16 अगस्त, 2002 में निगम के अधिनियम में पुनः संशोधन किया गया। इस संशोधन से निगम के लिए अब तक शेष बचे कार्यकलापों को सम्मिलित करने के अलावा सरकारी गारंटी के बिना सहकारिताओं को सभी तरह की गतिविधियों/बैंकेबिल प्रोजक्ट लगाने के लिए मदद प्रदान करना आसान होगा।

उद्देश्य

- कृषि ग्रामीण विकास एवं संबद्ध क्षेत्रों में सहकारिताओं के संवर्धन एवं विकास को महत्व देना।
- संबंधित संगठनों के साथ निकटस्थ समन्वय में संपर्क एवं कार्य करना और उपयुक्त मंचों पर सहकारिताओं के हितों की आवाज बुलंद करना।
- देश में आए आर्थिक उदारीकरण के वातावरण में कृषि एवं संबद्ध सहकारिताओं के आर्थिक विकास को बनाए रखना तथा लघु एवं सीमांत किसानों और समाज के कमजोर वर्गों के सदस्यों की आय को बढ़ाने में उदार शर्तों पर आर्थिक सहायता प्रदान करना।

प्रबंधन

निगम का प्रबंधन 51 सदस्यीय सामान्य परिषद तथा 12 सदस्यीय प्रबंधनमंडल करता है। सामान्य परिषद सर्वोच्च नीति–निर्धारक निकाय है जिसकी अध्यक्षता केंद्रीय कृषि राज्यमंत्री करते हैं। केंद्रीय सहकारिता प्रभारी मंत्री सामान्य परिषद के उपाध्यक्ष और प्रबंधमंडल के अध्यक्ष भी होते हैं। निगम के मुख्य कार्यपालक अधिकारी, प्रबंध निदेशक होते हैं जो अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा के वरिष्ठ अधिकारियों में से चुने जाते हैं। निगम के मुख्यालय में 9 कार्यात्मक प्रभाग हैं जो प्रशिक्षण तथा जनशक्ति विकास सहित विभिन्न कार्यक्रमों के क्रियान्वयन की देखभाल करते हैं। गुड़गांव में निगम का ट्रेनिंग सेंटर है जिसमें समितियों के प्रबंधकों को ट्रेनिंग दी जाती है।

क्षेत्रीय निदेशालय

- निगम के 15 क्षेत्रीय निदेशालय विभिन्न राज्यों की राजधानियों में हैं। क्षेत्रीय निदेशालय अपने–अपने क्षेत्रों में क्षेत्र आधारित/विशिष्ट परियोजनाओं की पहचान, परियोजना प्रस्ताव तैयार करने, क्रियान्वयन एवं अनुश्रवण की निगरानी एवं समन्वय स्थापित करने के लिए उत्तरदायी हैं। बीस लाख रुपये के प्रोजेक्ट सीधे क्षेत्रीय निदेशालय, सहकारिता भवन, 14–विधानसभा मार्ग, लखनऊ, द्वारा स्वीकृत किए जाते हैं।

वित्तीय व्यवसाय

चूंकि सहकारिता राज्य का विषय है इसीलिए सभी प्रकार की सहकारी समितियों/संघों के व्यवसाय सुदृढ़ीकरण, ढांचागत सुविधाओं के सृजन तथा निर्माण एवं तकनीकी और प्रबंधकीय विकास के लिए निगम द्वारा स्वीकृत आर्थिक सहायता राज्य सरकार के माध्यम से प्रदान की जाती है। निगम द्वारा राज्य सरकारों को दो प्रमुख हेड (क) केंद्रीय सेक्टर/केंद्रीय प्रवर्तित स्कीमों और (ख) निगम प्रवर्तित स्कीमों के अंतर्गत आर्थिक सहायता दी जाती है। इसके अतिरिक्त भारत सरकार के विभिन्न विभागों द्वारा देय प्रोत्साहन राशि भी कई महत्वपूर्ण योजनाओं को चलाने के लिए निगम के माध्यम से संचालित की जाती है।

1. विपणन विकास कार्यक्रमः प्रदेश में कृषकों के कृषि उत्पाद के विपणन हेतु 236 क्रय व विक्रय सहकारी समितियों व 49 जिला सहकारी संघों को व्यवसाय बढ़ोतरी हेतु 15.39 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता प्रदान की जा चुकी है।

2. कृषि निवेश–कृषक सेवा केंद्रः निगम द्वारा सभी प्रकार की सहकारी समितियों को कृषिनिवेश यथा उर्वरक, कीटनाशक, दवाइयों, उन्नतिशील बीज, कृषि मशीनों के वितरण हेतु लगभग 10 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता प्रदान की गई है।

3. सहकारी चीनी मिलों की स्थापना : प्रदेश में गन्ने की पिराई हेतु कुल 107 चीनी मिल इकाइयां हैं। सहकारिता के क्षेत्र में कार्यरत 28 चीनी मिलों की स्थापना में उनकी क्षमता, विस्तारीकरण/आधुनिकीकरण के साथ–साथ उपोत्पाद इकाई, डिस्टलरी इकाई की स्थापना हेतु निगम द्वारा एवं निगम के माध्यम से एस.डी.एफ की उदार सहायता के रूप में अब तक कुल 303.28 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता उदार शर्तों पर प्रदान की गई है। लगभग 200 केन यूनियनों को गोदाम निर्माण व मार्जिनमनी के रूप में 10 करोड़ रुपये की अतिरिक्त आर्थिक सहायता दी गई है।

सहकारी चीनी मिलों को को–जनरेशन, इथनैल प्लांट लगाने के लिए गन्ना चीनी निधि (एस. डी.एफ.) योजना के अंतर्गत कम ब्याजदर पर आर्थिक सहायता दी जाती है। रुग्ण चीनी मिलों के पुनरोद्धार हेतु भी विशेष योजना तैयार की गई है जिसमें 20 प्रतिशत अनुदान प्रस्तावित है।

चीनी मिलों एवं संबंधित सहकारी समितियों/संघों के विकास एवं समृद्धि हेतु सहायता का भी प्रावधान है जिसके अंतर्गत रमाला चीनी मिल को 10 करोड़ रुपये भंडारण क्षमता सृजित करने के लिए लगभग 8 करोड़ रुपये स्वीकृत किए गए हैं।

4. शीतगृह/प्याज भंडारण की स्थापना: उत्तर प्रदेश में सहकारिता के क्षेत्र में 90 शीतगृह निर्मित हैं जिनकी कुल क्षमता 2,82,600 टन है। निगम द्वारा इन शीतगृहों को अभी तक 29.89 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जा चुकी है। वर्तमान में शीतगृह/ बर्फखाना तथा प्याज भंडारण निर्माण लागत के अंतर्गत 25 प्रतिशत उपदान सहायता प्रदान किए जाने का भी प्रावधान है। इसके अतिरिक्त हरदुआगंज, जनपद अलीगढ़ की एक समिति को दो करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता स्वीकृत की जा चुकी है।

5. सहकारी कताई समिति मिल : बुनकरों व हथकरघा/पावरलूम उद्योग को विकसित करने के उद्देश्य से प्रदेश में सार्वजनिक व सहकारी क्षेत्र में कुल 24 कताई मिलें हैं जिनमें से 11 सहकारी कताई मिलों के विकास एवं आधुनिकीकरण हेतु एन.सी.डी.सी. द्वारा कुल 53 करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता प्रदान की गई है।

6. एकीकृत सहकारी विकास परियोजना (आईसी.डी.पी.) : चुनिंदा जिलों के सहकारी आधारभूत ढांचे के समग्र विकास हेतु पांच वर्षीय परियोजना स्थापित कर सभी क्षेत्रों जैसे सहकारिता, कृषि, पोल्ट्री, फिशरी, बुनकर, बागवानी, रेशम व अन्य एलाइड सेक्टर के सभी क्षेत्र की समितियों के इन्फ्रास्ट्रक्चर निर्माण, व्यवसाय वृद्धि हेतु मार्जिनमनी, अंशपूंजी एवं मानव विकास संसाधन हेतु वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जाती है। परियोजना प्रतिवेदन एवं शिक्षण–प्रशिक्षण हेतु शत–प्रतिशत सहायता का भी प्रावधान है।

अब तक प्रदेश में 9 जनपदों यथा वाराणसी, जौनपुर, रायबरेली, मथुरा, गोरखपुर, रामपुर, बुलंदशहर, मुजफ्फरनगर एवं बागवत को समग्र सहकारी विकास हेतु कुल लगभग 39.81 करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई गई है। नई कृषि नीति के अंतर्गत सभी जनपदों को आई.सी.डी.पी. योजना के अंतर्गत विकसित करने का व्यापक कार्यक्रम तैयार किया गया है जिसके परिणामस्वरूप अब तक चार जनपदों को स्वीकृत करने की प्रक्रिया चल रही है। चार जनपदों की डी.पी.आर. तैयार की जा चुकी है तथा चार अन्य जनपदों की डी.पी.आर तैयार करने की प्रक्रिया भी चल रही है।

7. फल–सब्जी, पुष्प एवं औषधि उत्पादन/विपणन विकास : प्रदेश की औद्योगिक समितियों/संघों को विपणन, विधायन, परिवहन वाहन खरीद, उत्पादों के भंडारण के लिए गोदामों/शेडों के निर्माण और बागवानी उत्पादों की कटाई पश्चात नुकसान को कम करने के उद्देश्य से आधारभूत सुविधाओं के सृजन के वास्ते निगम ने अपनी विभिन्न योजनाओं में एवं एन.सी.डी.सी. – एन.एच.बी की संयुक्त योजना में कुल लगभग 26 लाख रुपये की आर्थिक सहायता स्वीकृत की जा चुकी है। आधारभूत सुविधाओं के लिए केंद्रीय बागवानी बोर्ड, खाद्य प्रसंस्करण मंत्रालय एवं मेडिशनल बोर्ड द्वारा 25 प्रतिशत अनुदान भी उपलब्ध है।

8. भंडारण निर्माण : सहकारी समितियों को आवश्यक क्षमता के गोदामों के निर्माण/नवीनीकरण/उच्चीकरण के साथ–साथ मिनीबैंक, उपभोक्ता दुकान, कार्यालय और सचिवों के लिए आवास सुविधा आदि का निर्माण शामिल करते हुए निगम द्वारा अब तक लगभग बीस लाख रुपये विपणन/ग्रामीण भंडारण क्षमता सृजित की गई है और इस मद में 113 करोड़ रुपये की सहायता दी जा चुकी है। नए गोदाम के निर्माण व पुराने गोदामों की मरम्मत हेतु 25 प्रतिशत अनुदान भी दिया जा रहा है।

9. ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में उपभोक्ता कार्यक्रम : ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण व्यवसाय हेतु सभी सहकारी समितियों/संघों को मार्जिन मनी, वाहन खरीद, शॉपिंग काम्पलेक्स, फर्नीचर/फिक्स्चर, रिटेलशॉप, तेल टैंकर, शोरूम, गोदाम निर्माण व कम्प्यूटरीकरण आदि हेतु आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है।

उ.प्र. में कार्यरत 1,279 प्राथमिक उपभोक्ता भंडार, 53 केंद्रीय उपभोक्ता भंडार, 49 डी.सी.डी.एफ. तथा एक शीर्ष सहकारी संघ को उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण व्यवसाय एवं इन्फ्रास्ट्रक्चर विकास कार्य के लिए निगम द्वारा अब तक 23 करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता उपलब्ध करा चुका है।

निगम ने ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में उपभोक्ता व्यवसाय को बढ़ाने, सहकारी काम्प्लेक्स/सुपर बाजार, किसान हरियाली बाजार, भंडारण/शोरूम निर्माण तथा कम्प्यूटरीकरण प्रणाली स्थापित करने पर विशेष बल दिया है। इसी प्रकार शिक्षण संस्थाओं जैसी स्कूल, कालेज एवं विश्वविद्यालय में सहकारी उपभोक्ता भंडार/कम्प्यूटर सुविधाओं हेतु आर्थिक सहायता दी जाती है।

10. अनुसूचित जाति/जनजाति विकास कार्यक्रम : निगम ने जनजाति सहकारी समितियों/संघों को कृषिनिवेश, उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण, गोदाम निर्माण एवं वाहन क्रय आदि हेतु अब तक प्रदेश में 13.26 लाख की सहायता कम ब्याजदर पर प्रदान की है।

11. मत्स्यपालन विकास कार्यक्रम : प्रदेश में मत्स्य उद्योग के विकास, आधारभूत सुविधाओं के सृजन तथा मत्स्यपालन सहकारी समितियों/संघों के माध्यम से मछुआ सदस्यों के सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए निगम ने अब तक चार समितियों के लिए कुल 14 लाख रुपये की आर्थिक सहायता स्वीकृत की है। मत्स्य विभाग मत्स्यपालकों को 20 प्रतिशत अनुदान भी देता है।

12. पशुपालन, भेड़ व बकरीपालन, कुक्कुटपालन उद्योग : कुक्कुट सहकारी समितियों के विकास के लिए निगम ने अब तक दो समितियों को आवश्यक सुविधाओं के सृजन एवं कार्यशील पूंजी हेतु मार्जिनमनी की कुल 12.20 लाख रुपये की आर्थिक सहायता उदार ब्याजदर पर उपलब्ध कराई है। केंद्रीय ऊन विकास बोर्ड व उ.प्र. पोल्ट्री एवं लाइव स्टॉक विकास बोर्ड द्वारा भी कई तरह की सुविधाएं दी जा रही हैं।

13. हथकरघा/पावरलूम विकास: शीर्ष/क्षेत्रीय/प्राथमिक स्तर की बुनकर सहकारी समितियों को उनके हिस्सापूंजी आधार

को मजबूत करने, प्री/पोस्टलूम निर्माण, तकनीकी एवं संवर्धन क्षेत्रों में विशेषज्ञों की नियुक्ति एवं व्यवसाय विकास के लिए निगम ने कुल 88 लाख रुपये की उदार आर्थिक सहायता स्वीकृत की है। भारत सरकार की दीनदयाल उपाध्याय हथकरघा प्रोत्साहन योजना व हाईटेक पावरलूम की स्थापना हेतु 25 प्रतिशत अनुदान व ब्याजदर में 5 प्रतिशत विशेष छूट भी उपलब्ध है।

14. कंप्यूटर व साईबर कैफे/ढाबा/पाक योजना, कालसेंटर की स्थापना : निगम सहकारी समितियों/संघों/बैंकों की व्यावसायिक गतिविधियों की योजना बनाने एवं अनुश्रवण करने हेतु कम्प्यूटर की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध कराता है। वित्तीय सहायता साईबर कैफे/ढाबा/पार्क, बी.पी.ओ. व कालसेंटर स्थापित करने के लिए भी है।

15. प्रसंस्करण उद्योग : पी.सी.एफ. एवं अन्य समितियों द्वारा तेल इकाइयों, 15 धान मिलों एवं 19 दाल मिलों की स्थापना के लिए निगम से लगभग 16.60 करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता ली गई है। यद्यपि इनमें से अधिकांश बंद चल रही हैं परंतु जिन धान मिलों को कस्टम आधार पर चलाया गया है, वे सभी लाभ पर हैं।

खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना/अपग्रेडेशन/विस्तार के लिए भारत सरकार के खाद्य प्रसंस्करण मंत्रालय से 20 प्रतिशत अनुदान के साथ आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जा रही है। इसके अतिरिक्त एन.सी.डी.सी. द्वारा भी खाद्य प्रसंस्करण की रुग्ण इकाइयों के पुनरोद्धार के लिए 20 प्रतिशत के साथ विशेष योजना प्रस्तावित की गई है।

16. डेयरी सहकारिताएं : डेयरी विकास के लिए निगम कई योजनाएं चला रहा है। डेयरी समितियों को उनको अंशपूंजी/मार्जिनमनी की सहायता उनके व्यवसाय विकास/सुदृढ़ीकरण के लिए उपलब्ध कराई जाती है। इन्फ्रास्ट्रक्चर जैसे प्रशीतन इकाई की स्थापना/उनके आधुनिकीकरण के लिए एवं प्लांट मशीनरी एवं उपकरण के लिए उदार आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जाती है। पशुओं के स्वास्थ्य/उनके पालन– पोषण एवं बीमारियों इत्यादि से बचाव के लिए भी उदार आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जाती है। शीर्ष संघ/जिला दुग्धों को कार्यशील पूंजी की सहायता उपलब्ध कराई जाती है।

17. सेवा क्षेत्र : निगम के अधिनियम में संशोधन के उपरांत सेवाक्षेत्र के अंतर्गत कार्यरत पंजीकृत सहकारी समितियों को उनके अंशपूंजी आधार को सुदृढ़ करने के लिए अंशपूंजी/मार्जिनमनी की आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जा रही है। सेवा क्षेत्र में ढांचागत सुविधाओं जैसे ट्रांसपोर्ट, टूरिज्म, शिक्षा केंद्र, होटल, नर्सिंगहोम के सृजन के लिए उदार ऋण की सहायता उपलब्ध कराई जा रही है। इसके अतिरिक्त एग्रो–क्लीनिक बिजनेस/शोरूम/सेवा काम्प्लेक्स की स्थापना के लिए भी आर्थिक सहायता उपलब्ध है।

18. औद्योगिक सहकारिताएं : निगम के संशोधित अधिनियम के अंतर्गत औद्योगिक सहकारी समितियों को भी अंशपूंजी/मार्जिनमनी की सहायता उपलब्ध कराई जा रही है। इन समितियों को कोमन औद्योगिक कार्यशाला के निर्माण, उपस्करण, मशीनरी की स्थापना के साथ–साथ कार्यरत इकाइयों के आधुनिकीकरण/विस्तार के लिए भी ऋण सहायता उपलब्ध होती है। इसके अतिरिक्त औद्योगिक सहकारी समितियों में शोरूम निर्माण, गोदाम/गोदाम के साथ शोरूम/ विपणन काम्पलेक्स का निर्माण एवं पुराने ढांचों का उच्चीकरण/मरम्मत इत्यादि के लिए उदार आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जाती है। निगम द्वारा औद्योगिक सहकारी समितियों में योजना के अंतर्गत ग्रामीण उद्योग, साबुन/डिटर्जेंट/हर्बल दवाओं के निर्माण के उद्योग, पेपर प्रोडक्ट, रबर एवं प्लास्टिक/खिलौने एवं सजावटी समान के उत्पादन पर आधारित इकाइयों, वन उत्पाद, माचिस एवं अन्य अग्नि से संबंधित कार्यों, पेंट एवं वार्निश, चमड़ा एवं चमड़े के सामान, रिनेवल ऊर्जा एवं वातावरण सुरक्षा के उपकरण की निर्माण इकाइयों, इलेक्ट्रिकल/मैकेनिकल/इलेक्ट्रानिक कार्यशालाओं की स्थापना, मेडिकल एवं अन्य आवश्यक उपयोगी सामग्री, श्रमिक/दस्तकारों की सहकारिताओं के लिए आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जा रही है।

19. संवर्धनात्मक एवं विकासशील कार्यक्रम : निगम अपने इस कार्यक्रम के अंतर्गत शिक्षा एवं प्रशिक्षण, परियोजना प्रतिवेदन, वित्तीय प्रबंधन अध्ययन रिपोर्ट आदि तैयार करने के लिए वित्तीय सहायता अनुदान के रूप में अब तक कुल चार करोड़ रुपये प्रदान कर चुका है। इसके अतिरिक्त तीन जनपदों यथा मेरठ, इटावा, फैजाबाद को पायलट प्रोजेक्ट के रूप में रिसोर्स डेवलपमेंट सेंटर योजना में चुना है। लखनऊ जनपद के बक्शी का तालाब विकासखंड की सहकारी समितियों को और अकबरपुर क्रय–विक्रय सहकारी समिति के शीतगृह को निगम द्वारा विकास के लिए अंगीकृत किया गया है। इसके अतिरिक्त पी.सी.एफ. एवं किसान सहकारी चीनी मिल, ननौता के कुशल संचालन/प्रबंधन हेतु निगम द्वारा अंगीकृत किया गया है।

नवीन योजनाएं/कार्यक्रम

- कार्यशील पूंजी योजना;
- सिंचाई एवं जल संग्रहण योजना;
- जैव उर्वरक/आर्गेनिक मैन्योर/बायो कम्पोस्ट/वर्मीकल्चर इकाइयों की स्थापना;
- बीमार चीनी मिलों की स्थिति सुधारने, तकनीकी सुधार एवं को जनरेशन पॉवर प्रोजेक्ट, एक्सल्यूट एथिनाल डिस्टेलरी, टिशू कल्चर व बायो कम्पोस्ट हेतु उदार शर्तों पर ऋण उपलब्ध कराने की दिशा में पहल की गई है, जिसमें 40 प्रतिशत ऋण गन्ना विकास निधि के अंतर्गत 6 प्रतिशत ब्याज पर प्राप्त होगा।
- बीमार व बंद सहकारी कताई मिलों की पुनर्स्थापना एवं आधुनिकीकरण व पावरलूमों की स्थापना हेतु ब्याज अनुदान सहित नई योजना शुरू की गई है।
- पूर्ण/आंशिक रूप से पूर्ण नई सहकारी कताई मिलों तथा शहरी उपभोक्ता सहकारिताओं के लिए उपभोक्ता स्कीमों का विस्तार करने संबंधी सहायता सम्मिलित करने के लिए कताई मिलों संबंधी योजना में संशोधन किया गया है।
- **गोदामों के निर्माण/नवीनीकरण/विस्तारण के लिए कैपिटल इंवेस्टमेंट सब्सिडी योजना :** सहकारी क्षेत्र में शीत भंडारण क्षमता के सृजन का संवर्धन करने तथा वर्तमान शीतभंडारों की पुनर्स्थापना, आधुनिकीकरण, विस्तार करने हेतु 'कैपिटल इनवेस्टमेंट सब्सिडी स्कीम' लागू करने के लिए निगम को एक 'नोडल एजेंसी' के रूप में नामित किया गया है।

- महिलाओं को सहकारिता के माध्यम से अपनी गतिविधियों/व्यवसाय को भली–भांति चलाने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा परियोजना लागत की 40 प्रतिशत तक की धनराशि अनुदान के रूप में उपलब्ध कराई जा रही है।
- निगम द्वारा सेवा क्षेत्र के अंतर्गत इको टूरिज्म/मेडिकल हास्पिटल नर्सिंगहोम, पैरा मेडिकल प्रशिक्षण केंद्र/ट्रांसपोर्ट /डिस्पेंसरी, मैरिज हॉल, गेस्ट हाउस/ महिला होस्टल, पैथालोजी लैब/एक्स–रे सेंटर/कोरियर/ विज्ञापन फिल्म/शापिंग काम्पलेक्स/हेल्थ सेंटर/जिमनाजियम/एम्यूजमेंट पार्क (अप्पूघर), मृदा परीक्षण प्रयोगशाला इत्यादि के निर्माण/स्थापना के लिए सहकारिता के माध्यम से उदार आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जा रही है।
- सिड्बी ने भी 25 लाख रुपये तक टर्मलोन व कार्यशील पूंजी के लिए कोलेट्रल फ्री लोन ट्रस्ट फंड योजना की शुरुआत की है जिसका लाभ सहकारी समितियां भी उठा सकती हैं।
- स्माल फार्मस एग्रो–बिजनेस कंसोर्टियम (एस.एफ.ए.सी.) के अंतर्गत प्रोजेक्ट रिपोर्ट बनाने, ट्रेनिंग, वैंचर कैपिटल इत्यादि के लिए नाबार्ड द्वारा अनुदान उपलब्ध कराया जा रहा है।
- एन.सी.डी.सी. ने सहकारी समितियों/ संस्थाओं के प्रोजेक्ट तैयार करने के लिए एवं कंसल्टेंसी सेवा उपलब्ध कराने के लिए प्रधान कार्यालय में एक 'कंसल्टेंसी सेल' की स्थापना की है।

प्रशिक्षण एवं शिक्षा कार्यक्रम

(i) **सहकारी समितियों के कार्मिकों की तकनीकी/प्रबंधकीय विशेषता प्रशिक्षण** : यह योजना वरिष्ठ श्रेणी के मुख्य कार्मिकों जैसे प्रबंधक, इंजीनियर टैक्नोलॉजिस्ट, वरिष्ठ तकनीकीकार्मिकों के लिए भारत में प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए है।

(ii) **प्रबंध संस्थानों में संकाय के विकास के लिए शिक्षावृत्ति** : निगम ने भारतीय प्रबंध संस्थान, अहमदाबाद के प्रबंधकीय संकाय के विकास के प्रशिक्षण व बैकुंठ मेहता राष्ट्रीय सहकारी प्रबंध संस्थान, पुणे/सहकारी प्रशिक्षण कालेजों/सहकारी प्रशिक्षण केंद्रों में वरिष्ठ/मध्यम स्तर के अधिकारियों के प्रशिक्षण के लिए तीन वर्ष की अवधि के लिए दो शिक्षावृत्तियां संस्थापित की हैं।

(iii) **अच्छे कार्य कर रही विपणन/विधायन समितियों में अध्ययन भ्रमण कार्यक्रम** निगम देश में कार्य कर रही विपणन सहकारी समितियों तथा विधायन समितियों के प्रबंधमंडल के निदेशकों, कार्यकारी अधिकारियों तथा अन्य अधिकारियों के दौरों का आयोजन करता है ताकि उन्हें सफलतापूर्वक कार्य कर रही समितियों के विभिन्न पक्षों पर चर्चा एवं विचारों के आदाम–प्रदान में भाग लेने की सुविधा मिल सके। ऐसे भ्रमण खर्च की संपूर्ण लागत निगम द्वारा वहन की जाती है।

(iv) **सफल सहकारी समितियों के कार्यकलापों हेतु प्रोत्साहन योजना** वर्तमान वित्त वर्ष में निगम ने सभी आर्थिक क्षेत्रों जैसे कृषि, बागवानी, प्रसंस्करण, जड़ी–बूटी, हथकरघा, डेरी, लैम्पस, मत्स्य, पोल्ट्री आदि से जुड़ि समितियों के कार्यकलापों को बढ़ावा देने के लिए 'इंस्टीट्यूशन अवार्ड/प्राइज इंसेंटिव योजना शुरू की है। प्रदेश की सर्वश्रेष्ठ समितियों में से एक समिति का चुनाव निगम की प्रदेश स्तरीय कमेटी द्वारा किया जाएगा और चिन्हित की गई समिति को पांच हजार रुपये का नकद इनाम दिया जाएगा।

21. एग्रोक्लीनिक या एग्रोबिजनेस सेंटर योजना : कृषि मंत्रालय, भारत सरकार ने नाबार्ड के सहयोग से देशभर में किसानों तक खेती के उन्नत तरीके पहुंचाने के लिए एक लोकप्रिय कार्यक्रम एग्रोक्लीनिक/एग्रोबिजनेस सेंटर के रूप में प्रारंभ किया है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य कृषि स्नातकों की विशेषता का लाभ उठाना है। ये कृषि स्नातक स्वयं अपना एग्रोक्लीनिक या एग्रोबिजनेस सेंटर खोलकर अन्य किसानों तक अपनी विशेषता का लाभ पहुंचा सकते हैं। किसानों को विभिन्न प्रकार की कृषि संबंधी सलाह और सूचनाएं प्रस्तावित सेंटर के माध्यम से उपलब्ध से उपलब्ध होंगी। इस योजना के अंतर्गत 25 प्रतिशत अनुदान प्रस्तावित है और कृषि मंत्रालय द्वारा उद्यमियों को दो महीने की निःशुल्क ट्रेनिंग भी दी जाती है।

22. भारत सरकार की किसान कालसेंटर योजना : कृषि एवं सहकारिता मंत्रालय ने किसानों को आधुनिक खेती, डेरी, पशुपालन विकास, बागवानी, जड़ी–बूटी की खेती व फसलों की बीमारी की रोकथाम हेतु सभी जानकारी निःशुल्क उपलब्ध कराने के लिए उत्तर प्रदेश में कानपुर, उत्तरांचल, मध्य प्रदेश तथा छत्तीसगढ़ के लिए किसान कॉलसेंटर खोला है। **जिसका टोल फ्री नंबर 1551 है। किसान भाई किसी भी स्थान से उक्त फोन पर निःशुल्क जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।**

23. एन.सी.डी.सी. संशोधित (अंतर्गत प्रभावी) ब्याज दरें

24. कृषि आमदनी बीमा योजना : भारतीय कृषि बीमा कंपनी लि., नई दिल्ली द्वारा किसानों को उनकी उपज का उचित बाजार मूल्य देने, पैदावार, कम होने पर सुरक्षा, कृषि की नई तकनीक अपनाने, प्राकृतिक आपदा में फसलों

प्रभावी ब्याज दर

1. टर्म लोन राज्य सरकार के माध्यम से		9%
	एक वर्ष के लिए	8.5%
	एक वर्ष से अधिक के लिए	9%
अच्छी सहकारी समितियों को सीधे वित्तीय सहायता		
2. कमजोर वर्ग के कार्यक्रम जैसे मत्स्यपालन, महिला समितियां, पोल्ट्री, हथकरघा, सेरीकल्चर, डेरी		10%
3. अन्य योजनाओं/कार्यक्रम कार्यशील पूंजी		11%
	एक वर्ष के लिए	9.5%
	एक वर्ष से अधिक के लिए	10%

की क्षति रक्षा पूर्ति हेतु बीमा योजना शुरू की गई है। लघु व सीमांत किसानों को 75 प्रतिशत तथा अन्य किसानों को 50 प्रतिशत का प्रीमियम अनुदान भारत सरकार द्वारा वहन किया जा रहा है। बटाईदारों को भी उक्त योजना का लाभ मिलेगा। कृषि बीमा संबंधी जानकारी, कृषि बीमा कंपनी, जीवन भवन फेज़–2, हजरतगंज, लखनऊ फोन नं. 0522–22128866 /2272527 से प्राप्त की जा सकती है। निगम द्वारा भी इस योजना को प्रदेश के चुनिंदा जनपदों में चलाया जाना प्रस्तावित है।

सीधे वित्तपोषण हेतु समितियों द्वारा पूरी की जाने वाली पात्रता व निर्धारित मापदंड/शर्तें

(i) जो सहकारी समितियां तीन वर्ष से अधिक समय से कार्यरत हैं, उनके व्यावसायिक क्रियाकलाप, वित्तीय स्थिति, उनके द्वारा ऋण भुगतान की स्थिति को देखते हुए समिति द्वारा पर्याप्त सिक्योरिटी/मार्जिन उपलब्ध कराने पर।

(ii) समिति का नेटवर्थ धनात्मक होना चाहिए एवं सदस्यों द्वारा पूरी 100 प्रतिशत अंशपूंजी का भुगतान किया हुआ होना चाहिए। अचल परिसंपतियों का विवरण भी प्रस्तुत करना चाहिए।

(iii) समिति को पिछले तीन वर्षों से कोई नकद हानि न हुई हो और विगत तीन वर्षों में से कम से कम दो वर्षों में शुद्ध लाभ हुआ हो।

(iv) सामान्यतः परियोजना की आर्थिक वायबिलिटी हेतु ऋण अंशदान का अनुपात 65:35 होना चाहिए।

(v) सहकारी समितियों को ऋण के विरुद्ध 1.5 गुना की परिसंपत्तियों का मार्टगेज निगम के पक्ष में करना होगा तथा मार्टगेज की गई संपत्ति/सिक्योरिटी का प्रकार दर्शाना होगा।

(vi) सहकारी समितियों/संघों द्वारा आवश्यक कार्यशील पूंजी के लिए ऋण प्राप्त करने के वास्ते स्टॉक को डेटर्स/अन्य परिस्थितियों को बंधक रखना होगा, जिसमें कम से कम 20 प्रतिशत मार्जिन रखना आवश्यक होगा। यदि आवश्यकता हुई तो निगम अचल संपत्तियों पर प्रथम या द्वितीय चार्ज के लिए अतिरिक्त सिक्योरिटी मांग सकता है।

(vii) यदि आवश्यकता महसूस हुई तो समिति के किसी शिड्यूल बैंक या जिला/राज्य सहकारी बैंक में एस्को एकाउंट खोलने के लिए कहा जा सकता है अथवा पोस्ट डेटेड चैक एवं को–एप्लीकेंट के लिए सहमति ली जा सकती है।

(viii) वित्तीय वर्ष की समाप्ति के छह माह के अंदर पूर्व वर्ष के लेखों का ऑडिट पूरा होना चाहिए। जिन समितियों का ऑडिट सरकारी संप्रेक्षकों द्वारा किया जाता है एवं पूरा नहीं है, उनके लेखों का आडिट चार्टड एकाउंटेंट्स द्वारा करना होगा।

(ix) समिति का पंजीकरण एवं बाइलाज की प्रति लगानी होगी।

(x) सदस्यों की संख्या एवं उनकी अंशपूंजी की स्थिति दर्शानी होगी।

(xi) वस्तुवार विगत तीन वर्षों में किया गया व्यवसाय एवं अगले दो वर्षों की व्यावसायिक कार्ययोजना/लक्ष्य का विवरण प्रस्तुत करना होगा। ❑

मुख्य निदेशक,
राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम,
सहकारिता भवन, 17, विधानसभा मार्ग,
लखनऊ, (उ.प्र.)

प्रश्नोत्तरी

1. किस वैज्ञानिक के नाम को आप सेब से जोड़कर देखते हैं?
   (क) न्यूटन
   (ख) फ्लेमिंग
   (ग) थॉमस एडीसन
   (घ) आइंस्टीन
2. गेलीलियो ने किसका आविष्कार किया था?
   (क) टेलीफोन
   (ख) टेलीस्कोप
   (ग) टेलीविजन
   (घ) इनमें से कोई नहीं।
3. भारतीय संविधान की धारा 370 किससे संबद्ध है?
   (क) राष्ट्रपति की आपातकालीन शक्तियों से
   (ख) जम्मू कश्मीर राज्य की विशेष स्थिति के बारे में
   (ग) केंद्र और राज्यों के बीच करों के वितरण से
4. भारत में पहले आम चुनाव कब हुए थे?
   (क) 1949
   (ख) 1950
   (ग) 1952
   (घ) 1953
5. राष्ट्रपति राज्यसभा के कितने सदस्यों को मनोनीत कर सकते हैं?
   (क) 6 सदस्य
   (ख) 9 सदस्य
   (ग) 12 सदस्य
   (घ) 15 सदस्य
6. नोबेल पुरस्कार इनमें से कौन से क्षेत्र में नहीं दिया जाता?
   (क) भौतिकी
   (ख) रसायन विज्ञान
   (ग) चिकित्सा विज्ञान
   (घ) समाज सेवा
7. भारत के प्रथम राष्ट्रपति जिन्हें बिना किसी विरोध के चुना गया?
   (क) डा. राधाकृष्णन
   (ख) एन. संजीवा रेड्डी
   (ग) वी.वी. गिरी
   (घ) डा. राजेंद्र प्रसाद
8. भारतीय संसद के दो सत्रों के बीच अधिकतम अवधि कितने समय से अधिक नहीं होनी चाहिए?
   (क) तीन महीने
   (ख) छह महीने
   (ग) 9 महीने
   (घ) एक वर्ष
9. लोकसभा और राज्यसभा में अधिकतम कितने सदस्य होते हैं?
   (क) क्रमशः 525 और 250
   (ख) 545 और 250
   (ग) 535 और 275
   (घ) 500 और 280
10. क्षेत्रफल तथा जनसंख्या के हिसाब से भारत का सबसे छोटा राज्य कौन–सा है?
   (क) सिक्किम
   (ख) नगालैंड
   (ग) मेघालय
   (घ) मणिपुर

उत्तर
1) क 2) ख 3) ख 4) ग 5) ग
6) घ 7) ख 8) ख 9) ख 10) क

आत्मनिर्भर होने के दिन दूर नहीं

ऋषिका खरे

मध्य प्रदेश सरकार द्वारा बनाए गए नए जिलों में मंडला जिले की तहसील डिंडोरी भी शामिल थी, जिसे नए जिले का दर्जा दिया गया। आदिवासी बाहुल्य इस क्षेत्र को जिला बनाने की मंशा यही थी कि बैगा और गौड़ जाति के आदिवासियों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ा जाए ताकि उन्हें उनके उत्थान और समग्र विकास के लिए चलाई जा रही योजनाओं का सीधा लाभ कम से कम समय में प्राप्त हो सके।

इस क्षेत्र में रहने वाले आदिवासियों के पास कहने के लिए तो सैंकड़ों एकड़ जमीन थी, मगर पथरीली जमीन होने के कारण ऐसी जमीन होना न होना एक बराबर था। इतनी अधिक जमीन का मालिक होने के बावजूद अधिकांश लोगों को गरीबी–रेखा से नीचे माना गया। अत्यंत पिछड़ा, गरीबी की मार और विकास का नामोनिशान तक नहीं था यहां के गांव में। शायद यही कारण था यहां के आदिवासी खेती के मौसम के अनुसार उन स्थानों पर पलायन करने पर मजबूर हो जाते थे, जहां पर फसल लगाने से लेकर काटने तक मजदूरों की जरूरत होती थी।

ये दौर अभी चल ही रहा था कि पूरे प्रदेश में स्वयं की सहायता से स्वयंशक्ति या स्वयंसहायता समूह की शुरुआत हुई। महिला एवं बाल विकास शहपुरा डिंडोरी में परियोजना अधिकारी विद्या कुशराम ने बताया कि वह इस क्षेत्र में रहकर पढ़ी–लिखी और यहां तक पहुंची हैं। वह इस क्षेत्र में रहने वाली जाति की समस्या से बहुत अच्छी तरह से परिचित हैं। महिला एवं बाल विकास विभाग में आने के बाद से ही उन्होंने सर्वप्रथम विभाग की कल्याणकारी योजनाओं को ज्यादा से ज्यादा प्रचारित किया ताकि यहां की भोली–भाली जनता आगे आए, अपने अधिकार को समझे– जाने और लाभ प्राप्त करें।

विद्या कुशराम ने अपने क्षेत्र में स्वयंसहायता समूह बनाने की दिशा में सोचा लेकिन कठिनाई थी कि शुरुआत कहां से की जाए। जिस परिवार में खाने का ठिकाना नहीं, उससे 2 या 5 रुपये की कल्पना करना भी बेमानी था उनके लिए। इन सबके बाद भी उन्होंने लोगों को इस योजना के बारे में बताया। मगर किसी को स्वयंसहायता में रुचि नहीं थी, क्योंकि ये लोग पहले से कई बार धोखाधड़ी, छलकपट के शिकार हो चुके थे।

एक दिन आशा की किरण तक जागी जब एक 19–20 वर्ष की भोली–भाली कु. विमला मरावी उनके कार्यालय में आई और उसने स्वसहायता समूह के बारे में बहुत कुछ पूछा और हर अच्छे–बुरे नतीजे को भी जानना चाहा। पहले मुझे लगा कि वो मुझे परेशान देखकर आ गई है, मगर उससे बातें करके मुझे यह अहसास हुआ कि ये वही सीढ़ी है जिसकी तलाश में वह दिनोंदिन गांवों के दौरे कर रही थीं। वर्षों बाद इस क्षेत्र में कुछ नया करने का समय आ गया था। फिर क्या था, दोनों ने मिलकर लोगों को समझाना शुरू किया और यह भी समझाया कि जिस परिवार में पैसे जमा करने की कूबत नहीं होगी, वह हर रोज मुट्ठीभर अनाज समूह के नाम से निकालेगा जिसे माह बाद बेचकर उसका हिस्सा समूह में जमा कराया जाएगा। फिर क्या था, देखते ही देखते महिलाएं आगे आने लगीं और समूहभावना जागृत होने से समूह बनने शुरू हो गए।

कु. विमला मरावी ने अपने क्षेत्र में सर्वप्रथम वर्षा स्वसहायता समूह की स्थापना की जिससे 20 महिलाओं को जोड़ा गया। माह में चार बैठकें सुनिश्चित रखी गईं और 10 रुपये प्रतिमाह या उसके अनुपात में अनाज एकत्र कर कुल 200 रुपये प्रतिमाह जमा किए जाने लगे। दिसंबर 2000 से शुरू हुए इस समूह ने अब तक 2,000 रुपये जमा किए हैं। महिलाओं को बांस, महुआ, मुर्गीपालन, कचरिया आदि के लिए ऋण उपलब्ध कराया गया। सभी महिलाओं ने जातिगत व्यवसाय के अनुरूप अपना व्यवसाय शुरू कर दिया है। आज ये महिलाएं अनवरत रूप से ऋण ले रही हैं और समय पर लौटा भी रही हैं। दो साल पूरे होते–होते प्रत्येक महिला अपने व्यवसाय समूह में जमा कराने के बाद प्रतिमाह 400 से 500 रुपये का लाभ अर्जित कर रही है।

विमला ने पास के ही दूसरे गांव में दीदी स्वसहायता समूह की स्थापना कर डाली। इस समूह ने अब तक 3,000 रुपये से ज्यादा की राशि एकत्र कर ली है। इस समूह ने न केवल जातिगत व्यवसाय को अपनाया बल्कि गांव की अन्य महिलाओं के साथ पढ़ना–बढ़ना आंदोलन, पल्स पोलियो अभियान और टीकाकरण जैसे अभियानों को संचारित किया और बढ़–चढ़कर हिस्सा भी लिया।

विद्या अपने कार्य से मिली सफलता से पूर्णतः संतुष्ट हैं। उसका कहना है कि जिन उद्देश्यों को लेकर नौकरी शुरू की थी उसमें उसे शत–प्रतिशत सफलता हासिल हुई है। वह भविष्य में विमला जैसी लड़कियों को तैयार करना चाहती हैं ताकि इस क्षेत्र में उन्नति के ओर कई रास्ते खुल सकें। इसी दिशा में उन्होंने ग्राम ईमलायी ब्लाक शहपुरा की कमला धुर्वे को साथ लेकर गंगा स्वसहायता समूह की स्थापना की। यह गांव डिंडोरी मुख्यालय से लगभग 75 किलोमीटर दूरी पर स्थित है। 548 की आबादी वाले इस गांव की 20 महिलाओं को साथ लेकर इस समूह की स्थापना की गई। अक्तूबर, 02 में स्थापित इस समूह के पास कुल जमाराशि 14,000 रुपये हो चुकी है जिसमें से 9,000 रुपये की राशि बैंक में तथा शेष 5,000 रुपये की राशि आपस में ऋण के रूप में बंटी हुई है। दोना–पत्तल, मुर्गीपालन, हर्र, बहेड़ा, मक्का, कचरिया, राई और महुआ का व्यवसाय करने वाली महिलाएं आज 500 से 12,000 महीना लाभ प्राप्त कर रही हैं। यह समूह अभी तक सफल हुए समूहों में से एक हैं।

आज डिंडोरी में बनाए जाने के बाद 338 समूह 7 प्रोजेक्ट के अंतर्गत बनाए जा चुके हैं जिसमें लगभग 12 लाख रुपये की राशि बैंक में जमा है या ऋण के रूप में परिचालित हो रही है। इन्हीं समूहों के बनते गौड़ और बैगा जनजाति के लोगों में जीवन के प्रति आस्था जागी। महिलाएं स्वयं के व्यवसाय स्थापित होने से बहुत खुश हैं। वे प्रदेश में लगने वाले हरेक उत्सव और मेलों में अपने जिले का प्रतिनिधित्व कर रही हैं। विमला मरावी और कमला धुर्वे के साथ महिला एवं बाल विकास शहपुरा की परियोजना अधिकारी विद्या कुशराम का यह कहना है कि अभी तो शुरुआत है, आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के दिन अब दूर नहीं। ❑

ई–70, मीनाल रेसीडेंसी
जे.के. रोड, भोपाल

माइग्रेन : लक्षण और इलाज

डा. नीना कनौजिया

माइग्रेन को हेमीक्रेनिया, सूर्यावर्त या आधा शीशी का दर्द कहते हैं। यह कई घंटे तक बना रहता है तथा एक ही वेग में दर्द रहता है। आधे सिर में दर्द होने के कारण ही इसे आधा शीशी का दर्द कहते हैं जो सिर के एक प्रदेश से प्रारंभ होता है फिर आधे सिर में या पूरे सिर में हो जाता है, कभी–कभी गले तक में फैल जाता है।

किसी–किसी को यह दर्द सूर्योदय के साथ शुरू होता है और जब सूर्य अपने प्रचंड रूप में हो यानी दोपहर के समय में यह दर्द तीव्र गति से बढ़ता है। परंतु जैसे ही सूर्य ढलने लगता है तो यह दर्द भी कम होने लगता है और सूर्य के अस्त होने के बाद स्वतः ही समाप्त हो जाता है। इसी कारण इसे सूर्यावर्त भी कहते हैं।

कारण

- क्रोध, चिंता, मानसिक, शारीरिक परिश्रम के कारण थकावट या अधिक पढ़ने आदि से आंखों पर अधिक जोर पड़ने से अर्ध–सिरशूल हो जाता है।
- जब कोई व्यक्ति अधिक मिर्च–मसाले, तेल या शुष्क खाद्य पदार्थों का उपयोग या सेवन करता है।
- कब्जियत के कारण भी सिरशूल हो जाता है।
- कुछ स्त्रियों में मासिक धर्म से पूर्व भी तनाव के कारण माइग्रेन हो सकता है।
- उच्च रक्तचाप के कारण तथा मूत्र संबंधित रोग के कारण भी यह रोग उत्पन्न हो सकता है।
- पसीना निकलने के तुरंत बाद यदि स्नान कर लिया जाए तो भी माइग्रेन होता है।
- मलमूत्र, छींक, जम्हाई आदि जैसे वेगों को रोकने से भी यह रोग उत्पन्न हो सकता है।
- पुरुषों की तुलना में यह रोग स्त्रियों को अधिक होता है।
- स्त्रियों में इस रोग का संबंध मासिक धर्म, गर्भावस्था या प्रसव के बाद के कुछ महीनों में विशेष रूप से रहता है।
- यदि क्षुधा तृप्त नहीं है तो भी यह रोग उत्पन्न हो सकता है।
- जो व्यक्ति बेकार बैठे हैं या जो दिमागी कार्य ज्यादा करते हैं वे भी इस रोग से ग्रस्त हो सकते हैं।
- जो व्यक्ति प्रदूषित वातावरण में रहते हैं, उनके भी सिर में दर्द हो जाता है।
- यदि यह रोग माता–पिता को है तो संभव हो सकता है कि यह रोग उनकी संतान को भी मिल जाए यानी यह रोग आनुवांशिक भी है।

लक्षण

प्रातःकाल उठने के उपरांत, जब रोगी अपना सिर उठाता है तो उसे चक्कर आता है, आंखों के सामने अंधेरा–सा लगता है। उसे उस अंधेरे में तारे जैसी चीज चमकती–सी दिखती है।

- रोगी का जी मचलाएगा या अरुचि–सी लगेगी और उसमें वमन या उल्टी होने के लक्षण भी मिलेंगे।
- सतवाहिनियों के फैल जाने से नेत्र के पश्चिम प्रदेश में चुभने–सा दर्द प्रतीत होगा और जिस आंख के सामने अंधेरा–सा लगता है, उसके विपरीत दिशा में दर्द आरंभ हो जाता है।
- तेज प्रकाश, तेज आवाज, शोरगुल से या हिलने से यह दर्द और बढ़ जाता है। जैसे–जैसे दर्द बढ़ता है, अरुचि और वमन सी प्रतीत होती है और वमन होने के बाद रोगी को थोड़ी राहत मिलती है। जब रोगी को नींद आ जाती है और सोकर उठने के बाद उसका दर्द लगभग समाप्त हो चुका होता है।
- माइग्रेन का दौरा उस व्यक्ति पर भी पड़ता है, जो अपने मन के भावों को दूसरों के समक्ष व्यक्त नहीं कर पाते और भाव को अंदर ही अंदर बढ़ाकर रखते हैं।
- सिरदर्द के कारण रोगी बहुत व्याकुल रहता है, उसे नींद भी नहीं आती है, खाने–पीने की इच्छा नहीं रहती है और वह कमजोर हो जाता है। उसे रोशनी अच्छी नहीं लगती है जिससे वह अंधेरे में रहना ज्यादा बेहतर समझता है। यह दर्द 12 घंटों के बाद समाप्त हो जाता है।

चिकित्सा

- सर्वप्रथम यह देखना चाहिए कि किस कारण से सिरदर्द है, और उस मूल कारण को दूर करने का उपाय करना चाहिए।
- जब रोगी को माइग्रेन का दौरा पड़े तो सिर को बांध देने या शीत उपचार करने से लाभ मिलता है। रोगी को अंधेरे कमरे में रखना चाहिए, उसे तेज रोशनी से बचाना चाहिए। 100 प्रतिशत आक्सीजन के नेसल मास्क द्वारा भी दर्द को कम किया जा सकता है।
- निद्रा या आराम करने से अत्यंत लाभदायक परिणाम निकलते हैं।
- जिन रोगियों को अजीर्ण की शिकायत हो या मलावरोध हो, उन्हें विरेचक औषधि देकर उनकी कब्जियत को समाप्त करने से भी माइग्रेन में लाभ मिलता है।
- रोगी को नींबू पानी में हल्का–सा नमक मिलाकर देने से भी लाभ मिलता है। इससे शरीर के लवण की आवश्यकता की पूर्ति

भी होती है। विटामिन बी, विटामिन बी^{12} प्रतिदिन लेने से लाभ मिलता है। कैल्शियम ग्लूकोनेट के लेते रहने से भी लाभ मिलता है। मानसिक आवेश से अति मानसिक व शारीरिक श्रम से बचना चाहिए।

- दर्द निवारक औषधियां ली जा सकती हैं।
- आंखों पर अधिक जोर देकर नहीं पढ़ना चाहिए और उचित रोशनी में ही पढ़ना चाहिए। इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिए कि रोशनी की दिशा किधर से है। रोशनी एकदम सामने से नहीं आनी चाहिए, न हीं पीछे से, रोशनी की दिशा हमेशा बाईं ओर होनी चाहिए। यदि टेबललैंप का उपयोग कर रहे हों तो उसकी रोशनी, नीचे की तरफ टेबल पर होनी चाहिए, आंखों पर रोशनी नहीं लगनी चाहिए।
- यदि नियमपूर्वक हल्का व्यायाम एवं मालिश की जाए तो माइग्रेन के वेग से बचा जा सकता है।
- आर्तवकाल के समय होने वाले सिरदर्द के लिए एक हफ्ते पूर्व से ही, प्रोजेस्ट्रान लेने से इस दर्द से बचा जा सकता है।

आयुर्वेदिक उपचार

आयुर्वेद में भी सिरदर्द के लिए उचित उपचार है। आयुर्वेदानुसार सिरशूल कपाल की रक्तवाहिनियों में वायु के प्रकुपित होने से अर्थात् प्राणशक्ति की हीनता से उनमें स्तंभ तथा शैथिल्य होकर आधे सिर में दर्द होता है। इससे रोगी को कोई भी औषधि देने से पूर्व विरेचन द्वारा उसके पेट की सफाई करनी चाहिए।

- रोगी को त्रिफलाचूर्ण, रात्रि के समय गुनगुने पानी के साथ देने से लाभ मिलता है।
- सिरदर्द से राहत के लिए ऐसे पदार्थों का सेवन कम कर देना चाहिए जिनसे गैस या अम्ल अधिक बनता हो जैसे चाय, कॉफी, चॉकलेट आदि। हल्के तथा सुपाच्य भोजन का ही सेवन करना चाहिए।
- यदि रात में सोने से पूर्व स्नान कर लिया जाए तो सिरशूल में आराम मिलता है।
- यदि कोई व्यक्ति उच्च रक्तचाप से ग्रसित न हो तो वह सेब पर नमक छिड़ककर खाए तो लाभ मिलता है।
- सिरदर्द होने पर नींबू पानी में अदरक का रस और थोड़ा–सा नमक मिलाकर पिया जाए तो सिरदर्द कम होगा।
- देसी घी को सूंघने से भी लाभ मिलता है।
- रोगी को सिरदर्द होने पर भाप दिलाकर, नाक में षड़बिंदु तेल की बूंदे डालें तो ये बहुत लाभकारी होता है।
- सिरशूल हरवटी प्रातःकाल देने से लाभ मिलता है।
- यदि आप का वजन नियंत्रित है और उच्च रक्तचाप रोग से रहित हैं तो आप प्रातः काल देसी घी में तैयार बादाम का हलुवा खाएं तो सिरशूल दूर होता है।
- लक्ष्मी विलास रस की गोली देने से भी लाभ मिलता है।
- दशमूल तेल या भृंगराज तेल की मालिश करनी चाहिए।
- यदि गर्मी के मौसम में सिरदर्द हो तो शीत उपचार करना चाहिए। रोगी को गर्म व तेज धूप से बचना चाहिए। यदि तेज धूप में निकलना ही है तो टोपी, चश्मा, छाता, तौलिया आदि से सिर को धूप से बचाएं।
- कुछ लेपों का भी प्रयोग करने से राहत मिलती है जैसे कद्दू (सीताफल) को पीसकर उसका लेप लगाएं या तरबूज के बीजों का लेप कर सकते हैं।
- मुल्तानी मिट्टी में चंदन पाउडर मिलाकर लेप कर सकते हैं।
- अदरक का रस निकालकर उसका लेप करने से भी सिरदर्द में लाभ मिलता है।
- लौंग, कपूर, चंदन और इलायची को पीस लें और उसमें गुलाब जल मिलाकर माथे पर लेप करने से राहत मिलती है।
- यदि आप की आंख में कोई परेशानी है या दृष्टिदोष है तो भी सिर में दर्द होता है। अतः आंख की चिकित्सा करने से सिरशूल स्वतः समाप्त हो जाता है।
- माइग्रेन से पीड़ित व्यक्ति को ठंडी चीजें चॉकलेट, नट, ड्राइफ्रूट, केला, संतरा, टमाटर, चीज, मक्खन जैसी चिकनाईयुक्त चीजों से परहेज करना चाहिए। सूर्य की तेज रोशनी से बचना चाहिए।
- रोगी को खाली पेट नहीं रहना चाहिए परंतु भोजन हल्का व सुपाच्य होना चाहिए। अधिक तेल, मसाले व गरिष्ठ भोजन का त्याग करना चाहिए। सुबह और शाम प्राकृतिक वायु में सैर करनी चाहिए जिससे उचित आक्सीजन मिल सके।
- सोडा वाटर का सेवन भी कर सकते हैं।
- रोगी के नाक में षड़बिंदु तेल डालने से भी लाभ मिलता है।
- सभी प्रकार के सिरशूल में बादाम पाक एक बार जरूर देना चाहिए।

बड़ों के अतिरिक्त छोटे बच्चों में भी अक्सर सिर में दर्द पाया जाता है। कुछ तो इतने छोटे बच्चे इस रोग से ग्रसित होते हैं जो अपनी परेशानी के बारे में बता भी नहीं पाते और रोते रहते हैं। वह दूध नहीं पीते और बार–बार सिर पर हाथ फेरते रहते हैं।

कुछ बच्चों में इस रोग का पता लगाने के लिए यह देखते हैं कि वो बच्चा दूध नहीं पीता है, या खाने में अरुचि प्रदर्शित करता है, उसे उल्टी होती है तथा वो चिड़चिड़ा–सा रहता है।

- कभी–कभी किसी बच्चे के सिर में पहले चोट लगी होती है और ठीक हो जाने के बाद भी सिर में दर्द रहता है।
- यदि किसी बच्चे के कान या नाक में संक्रमण हो गया है तो भी उसके सिर में दर्द हो सकता है।
- तेज रोशनी, तेज धूप, तेज आवाज, प्रदूषण का प्रभाव भी सिर पर पड़ता है और सिरदर्द हो सकता है।
- यदि आप तेज आवाज से टीवी देखते हैं तो उसे ठीक करें।
- कम रोशनी में पढ़ाई नहीं करनी चाहिए। उचित प्रकाश एवं स्वच्छ वायुदार कमरे में ही अध्ययन करना चाहिए।
- ठंड के मौसम में सर्दी से बचना चाहिए।
- यदि छोटा बच्चा रो रहा है तो समझने की कोशिश करें कि उसे कहां पर परेशानी है।
- यदि सभी सावधानियां बरतने के बाद तथा औषधि खाने से भी लाभ न मिले तो आंख की जांच जल्दी–से–जल्दी कराकर उचित चिकित्सा करानी चाहिए। ❑

रक्तदान से जुड़े कुछ प्रश्न

डा. विनोद गुप्ता

विदेशों में रक्तदान को लेकर लोगों में काफी जागरूकता है जबकि हमारे देश में लोग आज भी रक्तदान की नौबत आने पर बगलें झांकते हैं और धीरे–धीरे खिसक जाते हैं। जाहिर है इसके पीछे गलत धारणाएं एवं भ्रांतियां हैं। आवश्यकता इन भ्रांतियों को दूरकर लोगों को रक्तदान के लिए प्रेरित करने की है ताकि इंसानी जिंदगियों को मौत के मुंह में जाने से बचाया जा सके।

प्रश्न : रक्तदाता का रक्त किस प्रकार निकालते हैं?

उत्तर : रक्तदान करना बिल्कुल आसान है। जिसे रक्तदान करना होता है, उसे एक टेबल पर लिटाया जाता है। उसके हाथ की शिरा में एक सुई प्रविष्ट करा दी जाती है। इस सुई का एक भाग एक नली से जुड़ा होता है जबकि नली का दूसरा सिरा बोतल से जुड़ा रहता है। इस बोतल को टेबल के लेवल से नीचे किसी स्टूल पर रखा जाता है। धीरे–धीरे रक्त की बूंदे शिरा से निकलकर बोतल में आने लगती हैं तथा पंद्रह मिनट में करीब 200 मिली. रक्त बोतल में आ जाता है। अब रक्तदाता की शिरा से सुई को अलग कर दिया जाता है तथा बोतल से भी नली निकाल दी जाती है।

प्रश्न : रक्त एकत्रित करने वाली बोतल में पहले से क्या भरा रहता है?

उत्तर : रक्त बहुत जल्दी जमने वाली चीज है। उसमें थक्के न पड़ें और वह उसी रूप में तरल रहे, इसलिए उसमें एक तरल रंगहीन पदार्थ पहले से भरकर रखते हैं। इसकी मात्रा सौ से डेढ़ सौ ग्राम के बीच होती है।

प्रश्न : फ्रिज में रक्त कितने दिनों तक सुरक्षित रहता है?

उत्तर : रेफ्रिजरेटर में यदि चार डिग्री सेंटीग्रेट के तापमान पर उसे रखा जाए, तो वह दो सप्ताह तक सुरक्षित रहता है। फिर भी जितनी जल्दी हो, उसे रोगी को चढ़ा देना चाहिए।

प्रश्न : एक स्वस्थ व्यक्ति वर्ष भर में कितनी बार रक्तदान कर सकता है?

उत्तर : यदि व्यक्ति स्वस्थ है, तो साल में चार बार यानी हर तीन माह में एक बार रक्तदान कर सकता है।

प्रश्न : क्या रक्तदान करने से उसके पश्चात कमजोरी या चक्कर आते हैं?

उत्तर : वैज्ञानिक दृष्टि से ऐसा कुछ नहीं होना चाहिए। यदि किसी को कमजोरी या चक्कर जैसा महसूस होता है, तो ऐसा मनोवैज्ञानिक कारणों से होता है, क्योंकि हमारे यहां यह धारणा प्रचलित है कि रक्तदान करने से कमजोरी आती है। हां, जो पेशवर रक्तदाता हैं, उन्हें ऐसा अवश्य हो सकता है, क्योंकि वे बार–बार समय के पूर्व ही रक्त निकलवाते हैं।

प्रश्न : एक बार के रक्तदान में कितना रक्त लिया जाता है?

उत्तर : आमतौर पर एक बार में 200 से 250 मिली. रक्त निकाला जाता है। उल्लेखनीय है कि एक स्वस्थ मनुष्य के शरीर में रक्त की मात्रा करीब छः लीटर होती है, इसलिए रक्तदान करने पर कोई फर्क नहीं पड़ता।

प्रश्न : रक्तदान के पश्चात कितने समय में उसकी पूर्ति हो जाती है?

उत्तर : रक्तदान के पश्चात दस से पंद्रह दिनों में उतना नया रक्त बन जाता है, जितना कि दान किया गया होता है।

प्रश्न : क्या किसी को किसी का भी रक्त चढ़ाया जा सकता है?

उत्तर : नहीं। किसी भी व्यक्ति को रक्त चढ़ाने से पूर्व उसके ब्लडग्रुप और रक्तदाता के ब्लडग्रुप का मिलान किया जाता है। मिलने पर ही रक्त चढ़ाया जाता है। यूं तो दिखने में सभी का रक्त एक जैसा लाल दिखाई देता है, पर एंटीजन के अणुओं की भिन्नता की वजह से वह अलग–अलग होता है।

प्रश्न : संक्रमित रक्त चढ़ाने के क्या दुष्परिणाम होते हैं?

उत्तर : यदि रक्तदान करने वाला एड्स, कैंसर, टीबी, हेपेटाइटिस बी आदि जानलेवा बीमारियों से ग्रसित है, तो उसका रक्त चढ़ाने से, जिसे वह रक्त चढ़ाया गया है, इन बीमारियों की चपेट में आ सकता है।

प्रश्न : क्या रक्तदान से किसी दुर्घटनाग्रस्त व्यक्ति की जान बचाई जा सकती है?

उत्तर : हां। दुर्घटना में प्रायः शरीर का अधिकांश रक्त बह जाता है और रक्त की कमी की वजह से व्यक्ति की मौत हो सकती है। ऐसे में समय पर यदि उसे रक्त चढ़ा दिया जाए, तो उसे जीवनदान मिल सकता है।

प्रश्न : दुर्घटना के अलावा किन–किन परिस्थितियों में किसी को रक्त चढ़ाया जाता है।

उत्तर : जब किसी भी वजह से शरीर में रक्त की कमी हो जाए, रक्त चढ़ाने की आवश्यकता पड़ सकती है जैसे खूनी दस्त, खूनी उल्टियां, मासिक धर्म के दौरान अधिक रक्तस्राव, प्रसव के समय अत्यधिक रक्तस्राव, टीबी आदि। इसके अलावा रक्त की कमी का शिकार गर्भवती महिलाओं, गंभीर रूप से जले हुए व्यक्ति आदि को भी रक्त की जरूरत पड़ सकती है। इसी प्रकार कुछ बीमारियों की वजह से भी शरीर में रक्त चढ़ाने की आवश्यकता होती है जैसे रक्त कैंसर। यदि व्यक्ति के शरीर में रक्त निर्माण की प्रक्रिया धीमी पड़ गई हो या अवरूद्ध हो गई हो, तो भी उसे रक्त चढ़ाने की जरूरत होती है। इसके अलावा कुछ बड़े आपरेशन जैसे ओपन हार्ट सर्जरी, अंग प्रत्यारोपण आदि के समय भी रक्त चढ़ाना जरूरी हो जाता है।

प्रश्न : स्वैच्छिक रक्तदान क्या है?

उत्तर : इसका अर्थ है स्वेच्छा से आगे आकर रक्तदान के लिए अपने आपको प्रस्तुत करना। इसमें परोपकार की भावना की प्रबल होती है, न कि कमाई करना।

प्रश्न : पेशेवर रक्तदाता कौन होते हैं?

उत्तर : जो लोग अपने खून को बेचने का व्यवसाय करते हैं, वे पेशेवर रक्तदाता कहलाते हैं। आमतौर पर गरीबी ही इसका मुख्य कारण है। ये लोग महीने में कई बार अपना खून बेचते हैं।

प्रश्न : क्या पेशेवर रक्तदाओं का खून दोयम दर्जे का होता है?

उत्तर : हां। चूंकि वे बार–बार रक्त बेचते हैं। इसलिए उनके रक्त में हीमोग्लोबिन की कमी होती है। गुणवत्ता में वह स्वैच्छिक रक्तदाता के रक्त से निश्चित तौर पर उन्नीस होता है।

प्रश्न : क्या रक्तदान महादान है?

उत्तर : हां इससे बढ़कर कोई दान या परोपकार नहीं है, क्योंकि रक्तदान करके आप किसी की जिंदगी बचाते हैं। यह अपने लिए संतोष और गर्व की बात होगी। युवाओं को इसके लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए। ❑

सुदामा नगर एक्सटेंशन–2,
रामटेकरी, मंदसौर, (म.प्र.)

निर्धनता निवारण की चुनौती

पुस्तक का नामः भारत की पंचवर्षीय योजना और निर्धनता निवारण; लेखक : डा. रविशंकर जमुआर; प्रथम संस्करणः 2003; प्रकाशक : राधा पब्लिकेशंस, नई दिल्ली; मूल्यः 250 रुपये; पृष्ठ सं. 137

देश में प्रारंभ किए गए योजनात्मक विकास के अभियान में निर्धनता निवारण की बात हमेशा की जाती रही है लेकिन नियोजन के पचास से अधिक वर्षों के बाद अब भी निर्धनता एक चुनौतीपूर्ण समस्या बनी हुई है। यद्यपि विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत लोगों की आर्थिक दशा को उन्नत करने हेतु नए–नए कार्यक्रम लागू किए गए हैं फिर भी धनाभाव, योजना कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में विलंब एवं त्रुटियां, जन–सहभागिता का अभाव, अशिक्षा और जागरूकता की कमी जैसे अनेक कारणों के चलते भारतीय अर्थव्यवस्था निर्धनता के श्राप से मुक्त नहीं हो सकी है।

इस पुस्तक में भारत में निर्धनता की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत क्रियान्वित अब तक के सभी निर्धनता निवारण कार्यक्रमों तथा योजनाओं का विश्लेषण किया गया है और उन त्रुटियों का वर्णन किया गया है जो कार्यक्रम तथा योजनाओं की असफलता के लिए उत्तरदायी हैं। साथ ही इस समस्या के समाधान हेतु कुछ महत्वपूर्ण सुझाव भी हैं।

पुस्तक सात अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय विषय प्रवेश के रूप में है जिसमें भारत में निर्धनता की समस्या पर प्रकाश डाला गया है। दूसरे अध्याय में भारत में निर्धनता तथा उसके स्वरूप की चर्चा की गई है जबकि तीसरे अध्याय में निर्धनता के लिए उत्तरदायी प्रमुख आर्थिक और गैर–आर्थिक कारणों की विशद् व्याख्या है।

अध्याय चार में पंचवर्षीय योजनाओं की चर्चा करते हुए निर्धनता निवारण के प्रयासों का उल्लेख है। पांचवां अध्याय निर्धनता निवारण के लिए सरकार द्वारा क्रियान्वित कार्यक्रमों एवं योजनाओं की व्याख्या प्रस्तुत करता है। छठे अध्याय में गरीबी दूर करने संबंधी कार्यक्रमों का मूल्यांकन है। सातवें और अंतिम अध्याय में निष्कर्ष एवं निर्धनता निवारण के लिए महत्वपूर्ण सुझावों का उल्लेख है। पुस्तक के अंत में सहायक ग्रंथों की सूची भी दी गई है।

यह पुस्तक विषय पर साधारण ज्ञान कराने में सक्षम है। निर्धनता निवारण योजनाओं और पंचवर्षीय योजनाओं का विवरण पुस्तक से मिल सकता है। पुस्तक का आवरण पृष्ठ दिखने में अच्छा है किंतु विषय से हटकर है। पुस्तक में नवीनतम जानकारियां नहीं हैं, बल्कि जानकारियों का संग्रह कर उनका विश्लेषण मात्र प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक की कीमत 250 रुपये अधिक है। पुस्तक का मूल्य अधिक रखकर इस विषय पर किस पाठक वर्ग के लिए यह पुस्तक लिखी गई है और किन तक यह पहुंच पाएगी, ये विचारणीय है।

स्वास्थ्य, स्वच्छता, पोषण तथा पंचायती राज

पुस्तक का नामः स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं पोषण तथा पंचायती राज; प्रकाशक : स्थानीय स्वशासन एवं उत्तरदायी नागरिकता संस्थान; विद्याभवन सोसायटी, उदयपुर (राजस्थान) प्रथम संस्करण : 2003; सहयोग राशि : 75 रुपये; पृष्ठ सं. 72

भारत में एक हजार जन्म लेने वाले बच्चों में लगभग 80 बालक पहला जन्मदिन मनाने से पहले ही मर जाते हैं; राजस्थाान में प्रतिदिन 250 शिशुओं और दो–तीन महिलाओं की प्रसव के दौरान मृत्यु हो जाती है; भारत में लगभग डेढ़ करोड़ लोगों को टी.बी. की बीमारी है और दुनिया में सबसे अधिक कोढ़ी हमारे देश में हैं। ऐसी ही कई जानकारियां हैं पहले अध्याय में। पुस्तिका में कुल 16 छोटे–छोटे अध्याय हैं जो इस प्रकार हैं : पहला सुख निरोगी काया; स्वास्थ्य पर बुरा असर डालने वाली आदतें; बच्चों की बीमारियों से संबंधित कुछ गलत मान्यताएं; संक्रामक रोगों की रोकथाम; बालकों को लगाए जाने वाले टीके; सामान्य बीमारियां और उपचार; महिला स्वास्थ्य; एड्स क्या है; मिरगी की बीमारी; स्वास्थ्य सुधार हेतु ग्राम पंचायत को क्या करना है; परिवार कल्याण; स्वास्थ्य सेवाओं का प्रबंधन; स्वच्छता; स्वास्थ्य का बीजमंत्र; फ्लोरोसिस रोग : लक्षण, कारण एवं उपाय; पौष्टिक भोजन; आकस्मिक दुर्घटनाएं और प्राथमिक उपचार आदि हैं।

पुस्तिका में सभी अध्यायों में रेखाचित्र के जरिए बातों को समझाकर कहने का प्रयास किया गया है ताकि पाठक की विषय में रुचि बनी रहे। स्वास्थ्य संबंधी सामान्य जानकारी के लिए पुस्तिका उपयोगी है। 75 रुपये सहयोग राशि भी ठीक ही है हालांकि अगर ये थोड़ी और कम होती तो ज्यादा लोगों तक इसकी पहुंच हो सकती थी। ❑

ल.खु.

जनकवि नागार्जुन

पुस्तक का नाम: जनकवि नागार्जुन; प्रथम संस्करण: 2004; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली; मूल्य: 60 रुपये; पृष्ठ सं. 18

कालिदास, सच–सच बतलाना
इंदुमती के मृत्युशोक से
अज रोया या तुम रोए थे।
कालिदास सच–सच बतलाना।

नागार्जुन की कविताएं एक जरूरी साक्ष्य और दस्तावेज हैं जिनमें पूरी शताब्दी की धड़कनें सुनी जा सकती हैं। नागार्जुन का साहित्य एक जीवंत इतिहास है। नागार्जुन का रचना संसार छोटों के जीवन संघर्ष की अभिव्यक्ति से बना था। नागार्जुन प्रगतिशील मूल्यों पर विश्वास करने वाली उस सशक्त परंपरा के महत्वपूर्ण अंग हैं जिसने किसान–मजदूर संघर्ष और नारी मुक्ति को कविता का केंद्रीय विचार बना दिया।

नागार्जुन के जीवन के सभी प्रसंगों को समेटती प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'जनकवि नागार्जुन' जहां एक ओर नागार्जुन के व्यक्तित्व के भास्वर पक्ष की विशद विवेचना करती है वहीं साहित्यिक जीवन के अनछुए पहलुओं से रूबरू होती चलती है।

संकलन के पहले ही लेख में विश्वनाथ त्रिपाठी ने नागार्जुन परंपरा और प्रयोग के बारे में लिखा है कि नागार्जुन का काव्य प्रतिमान है कि पारंपरिक काव्यरूपों में अपनी भाषा के ठेठ मुहावरे में, हिंदी और उसकी बोलियों की लय में आधुनिक जटिल अंतर्वस्तु कैसे व्यक्त की जा सकती है।

प्रसिद्ध साहित्यकार नामवर सिंह 'बाबा की ऐसी–तैसी' शीर्षक के जरिए बताते हैं कि नागार्जुन तब सबसे अच्छे लगते हैं जब वह अपनी ऐसी तैसी करते हैं। आगे वह लिखते हैं उन्हें बाबा कहलाना भी अच्छा लगता है। वह केशवदास नहीं हैं जो बाबा संबोधन सुनकर बुरा मान जाएं।

पं. वैद्यनाथ मिश्र हिंदी साहित्य में 'नागार्जुन' कहलाए और मैथिली साहित्य में 'यात्री' हो गए। उन्हीं 'यात्री के गांव में तीर्थयात्री' बनकर गए इब्बार रब्बी। संकलन के इस तीसरे लेख में नागार्जुन के बचपन से लेकर भिक्षु होने के साथ ही नागार्जुन की पत्नी, जिन्हें सभी बाबी कहते थे, का भी साक्षात्कार नागार्जुन के साथ उनके घरवालों के भी संघर्ष को व्यक्त करता है।

संकलन के चौथे लेख में बाबा नागार्जुन के साथ एक दिन बिताते हुए महेश दर्पण बताते हैं कि बाबा को कुछ लोग दधीचि कहते हैं। आगे वह लिखते हैं 'अनजाने में चुन लिया गया यह नाम सचमुच कितना सटीक है, हिंदी कविता को इस महाकवि ने अपनी हड्डियां नहीं दी हैं, क्या?

घर जैसी चीज में कभी न बंधने वाले नागार्जुन घर की दकियानूसी परंपरागत स्थितियों से कभी बाध्य नहीं हुए बल्कि परंपरा तोड़ने की ही कोशिश की।

कृष्ण मोहन झा 'ठेठ मैथिल चेहरा' में नागार्जुन के बारे में लिखते हैं कि हिंदी साहित्य के नागार्जुन मैथिल साहित्य में 'यात्री' नाम से जाने जाते थे। 'यात्री' का पहला कविता संकलन 'चित्रा' 1949 में छपकर आया। इस संकलन के पहले मैथिल कवियों की कविता के प्रति विद्रोह उठ खड़ा हुआ था– 'यात्री' ने इस विद्रोह को एक दिशा दी। साहित्यकारों के विषय में आम आदमी की धारणा को तोड़ते हुए 'साहित्यकार ऐसे नहीं होते' लेख में पंकज बिष्ट नागार्जुन के 85 वर्ष का होने पर प्रकाशन विभाग द्वारा उनके सम्मान में जन्मदिवस समारोह आयोजन के बारे में लिखते हैं। खासा बड़ा हाल होने के बावजूद बाबा के नाम पर ही हाल खचाखच भर गया था। आम साहित्य प्रेमियों से लेकर हिंदी के कवि, लेखक, दिग्गज, आलोचक, प्रोफेसर, साहित्य अकादमी के सचिव... एक ऐसे कवि का जो कभी किसी सरकारी या गैर सरकारी, महत्वपूर्ण तो क्या मामूली पद पर भी न रहा हो... इससे बड़ा सम्मान क्या हो सकता है।

संकलन के आठवें लेख में प्रकाश मनु नागार्जुन के उपन्यासों के संसार के विषय में विस्तृत वर्णन देते हैं। नागार्जुन के उपन्यास ग्राम्य व आंचलिक चेतना के ही वाहक हैं चाहे वह बलचनभा, वरुण के बेटे, बाबा बटेसरनाथ हों या रतिनाथ की चाची, और कुंभीपाक।

नागार्जुन के उपन्यास खुरदरे हैं तथा जीवन की जड़ों से ज्यादा गहरे और मजबूती से जुड़े हैं। 'अपराजेय जनकवि नागार्जुन' में रणजीत साहा ने जहां उनके जीवन का संक्षिप्त परिचय दिया है वहीं उनके कवि पक्ष के साथ उनके कई कवि नामों को भी उजागर किया है। संकलन में नागार्जुन की कुछ चुनी हुई कविताएं भी हैं और हैं उनके नहीं रहने पर आनंद स्वरूप श्रीवास्तव की श्रद्धांजलि 'मैं रहूंगा – सामने पर मूक।'

इस संकलन में नागार्जुन कई रूपों में हमारे सामने मौजूद हैं। वरिष्ठ साहित्यकारों ने नागार्जुन के वैयक्तिक सच के साथ उनके यथार्थ को भी प्रकट किया है। संकलन में संकलित लेखों से यह सिद्ध होता है कि राजनीति, पारिवारिकता, मित्रभाव, घुमक्कड़पन आदि का निर्वाह करते हुए नागार्जुन साहित्य व चिंतन के एक 'होलटाइमर' की भूमिका में खड़े दिखाई देते हैं। हल्के नीले रंग के आवरण पृष्ठ पर दृढ़ता से जमे हजार बांहों वाले नागार्जुन यही उद्घोषित कर रहे हैं–

देखोगे, सौ बार मरूंगा। देखोगे, सौ बार जिऊंगा, संकलनों के इस झरोखे में है नागार्जुन का संपूर्ण रचना संसार। ❑

सीमा ओझा

दसवीं महिला राजनीतिक सशक्तिकरण दिवस कार्यशाला में अपनाया गया 'मांग घोषणापत्र'

- महिलाओं के लिए पंचायतों में आरक्षण को बढ़ाकर 50 प्रतिशत कर दिया जाए और संसद और राज्य विधानसभाओं में भी महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित की जाएं।
- हर राज्य के प्रत्येक विभाग में महिलाओं के लिए कम से कम एक पंचायत प्रशिक्षण केंद्र स्थापित किया जाए ताकि चुनी गई महिला प्रतिनिधि अपने चुने जाने के एक वर्ष के भीतर अपनी कार्यक्षमता में वृद्धि कर सकें। वर्ष में कम से कम एक बार पुनश्चर्या पाठयक्रम आयोजित किए जाएं। महिला पंचायत सदस्यों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाएं जिनका उद्देश्य उनकी कार्यक्षमता में सुधार करना हो। उन्हें इंटरनेट की जानकारी भी दी जाए ताकि वे पंचायत का काम बेहतर तरीके से कर सकें।
- संसद सदस्यों, विधानसभा सदस्यों और अधिकारियों को पंचायतों के अनुदान कार्य तथा क्रियाकलापों के बारे में नियमित तौर पर जानकारी देने की व्यवस्था हो।
- गांव के स्तर पर निर्माण कार्यों में ग्राम पंचायतें यह सुनिश्चित करें कि महिला स्वयंसहायता समूहों को अनुबंध देने में प्राथमिकता दी जाए।
- यह सुनिश्चित किया जाए कि सभी स्तरों पर ग्रामसभा के प्रस्तावों को प्राथमिकता दी जाए खासतौर से महिलाओं और बच्चों संबंधी मुद्दों पर।
- विभिन्न स्तरों पर महिला संघ बनाने की सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं जोकि दबाव समूह के रूप में कार्य कर सकें।
- ग्राम पंचायत के उप प्रधान/उप सरपंच के पद के लिए महिलाओं को आरक्षण दिया जाए।
- महिला पंचायत सचिवों की पर्याप्त संख्या सुनिश्चित की जाए और एक पंचायत सचिव/गांव विकास अधिकारी को दो ग्राम पंचायतों से ज्यादा नहीं सौंपी जाएं।
- यह सुनिश्चित हो कि प्रत्येक राज्य सरकार राज्य और जिला स्तर पर पंचायत महिलाओं की अत्यावश्यक जरूरतों के लिए एक टॉल फ्री हेल्पलाइन स्थापित करें जोकि आवश्यकता पड़ने पर उन्हें पुलिस सहायता, सूचनाओं का विकेंद्रीकरण, कानूनी सहायता, सलाह आदि दे सकें ताकि स्थानीय स्तर पर महिलाओं की भागीदारी को मजबूत किया जा सके। दिल्ली में एक राष्ट्रीय केंद्र स्थापित किया जाए जोकि सभी राज्य स्तर की हेल्पलाइनों से समन्वय स्थापित करे और संसाधन केंद्र के रूप में कार्य करें।
- ग्रामसभा में महिलाओं को उप–कोरम उपलब्ध कराया जाए।
- महिलाओं को पंचायतों के सभी स्तरों की सभी समितियों में प्रतिनिधित्व दिया जाए और इस बात पर नजर रखी जाए कि समानांतर समितियों का गठन तो नहीं किया गया।
- पंचवर्षीय योजना का महिला घटक पंचायतों के जरिए लागू किया जाए।
- चुनाव के दौरान या बाद में महिला उम्मीदवारों के खिलाफ हिंसा करने वालों से निपटने के लिए सख्त कानून बनाए जाएं।
- पंचायतों के प्रतिनिधियों के लिए वर्तमान में लागू दो बच्चों के सिद्धांत का पालन किया जाए।
- भूमि तथा आवास का अधिकार पति–पत्नी दोनों के संयुक्त नाम से हो तथा अकेली, तलाकशुदा, दलित, आदिवासी, देवदासी, विधवा और सताई हुई महिलाओं और विस्थापित अथवा जातिगत दंगों की शिकार बेघर महिलाओं को भी भूमि तथा आवास के अधिकार दिए जाएं।
- महिलाओं को समान वेतन दिए जाने संबंधी कानून को सख्ती से लागू किया जाए।
- देश के भीतर तथा बाहर पंचायत महिला प्रतिनिधियों को आदान–प्रदान कार्यक्रमों की सुविधा दी जाए।
- अशिक्षित महिला पंचायत सदस्यों को विशेष छोटी अवधि के कार्यक्रमों के जरिए साक्षर किया जाए।
- देश में पंचायतों के सभी स्तरों पर महिला प्रतिनिधियों को उनके उत्कृष्ट कार्यों के लिए सम्मानित किया जाए।
- यह सुनिश्चित किया जाए कि सरकार राष्ट्रीय, राज्य तथा जिला स्तर पर महिला सशक्तिकरण दिवस मनाने के लिए अनुदान उपलब्ध कराए।

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. 12057/2003-05
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.) -55/2003-5

R.N./708/5
P&T Regd. No. DL 12057/2003-0
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2003-0
to Post without pre -payment at R.M.S. Delh

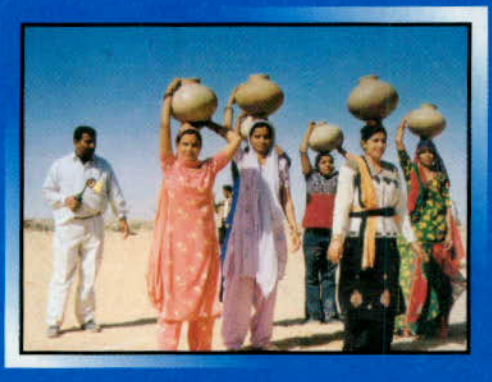

प्रो. उमाकांत मिश्रा, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया-II, नई दिल्ली-20 : प्रभारी संपादक : ललिता खुराना